विषय-सूची ।

तीसरा खण्ड ।

खुशखबरी ।

वेदान्त से प्रेम करने वाले सज्जनों से प्रार्थना है कि, आप लोग यदि "श्रीमद्भगवद्गीता" के गूढ़ तत्त्वों को बिना दिमाग़को तकलीफ दिये समझना चाहते हैं, तो हमारा "गीता" मँगा कर पढ़िये । इसकी भाषा ऐसी सरल है कि एक थोड़ासा हिन्दी पढ़ा हुआ बालक भी इसे बड़ी आसानीसे समझ सकता है । इसीसे इस की दो हज़ार प्रतियाँ वर्ष डेढ़ वर्षमें ही हाथों-हाथ निकल गईं ।

इस अनुवाद में सब से बड़ी खूबी भाषा की सरलता है । बिल्कुल घरों में बोली जाने वाली भाषा में इसका अनुवाद किया गया है, ताकि हमारी माँ बहिन और बेटियाँ भी इस संसार-सागर से पार करने वाले अमूल्य ग्रन्थ का आशय आसानी से हृदयङ्गम कर सकें । यही वजह है, कि सैकड़ों अनुवादों के होने पर भी, कई सालसे इस गीताका प्रचार भारतके कोने-कोने में हो रहा है । इसकी ज़बर्दस्त मांग और आशातीत लोक-प्रियता देख कर ही इस बार इसकी पाँच हजार प्रतियाँ छपाई गई हैं ।

इसमें ऊपर मूल श्लोक, श्लोक के नीचे भावार्थ, भावार्थ के नीचे लम्बी-चौड़ी टीका-टिप्पणी और जा-बजा फुट नोट दिये गये हैं । टीका-टिप्पणी पढ़नेमें उपन्यासकी भाषा का सा आनन्द आता है । इसमें पूरे अठारहों अध्यायों का अनुवाद है । गीता आरम्भ होने से पहले, मध्वाचार्य कृत भाष्य का खुलासा भी कोई ८० पृष्ठों में दे दिया गया है, इससे सोने में सुगन्ध हो गई है । बहुत क्या—अगर आपके पास अठारह गीता मौजूद भी हों, तो भी इस अनुवादको अवश्य देखिये । इसमें बड़े-बड़े कोई ५०० पृष्ठ और कई हाफटोन चित्र हैं । तिस पर भी मूल्य ३) सजिल्द का ३॥) ।

प्रस्तावना

योग-विद्या का विषय बड़ा गहन है। ऋद्धि-सिद्धिके झगड़ों में वह और भी कठिन हो गया है। वर्त्तमान समयमें इन बातोंका विश्वास करना मानों सभ्यताके विरुद्ध है; और है भी ठीक। योग मनुष्यकी शक्तियोंके विकाश की विद्या है। मनुष्य के भीतर अनन्त शक्तियाँ वर्त्तमान हैं। कभी-कभी जब किसी एक का विकाश होता है, तब उसे लोग ऋद्धि अथवा सिद्धि के पर्दों से ढक देते हैं और कोलाहल मच जाता है कि, अमुक विद्वान्-संन्यासी करामाती है। सैकड़ों स्वार्थी मनुष्य उस के पीछे धन, पुत्र, अर्थ, मुक़द्दमा इत्यादि-इत्यादि विषयों को लिये दौड़ते हैं। अभी तक यह विद्या ऐसे मनुष्यों के हाथों में रही है, जो संसार की उन्नति से अपने को अलग रखते रहे हैं। उन के सामने देश, जाति, वंश-कर्त्तव्य निरर्थक वाक्य हैं। इन्हें वे सांसारिक बन्धन समझते हैं। ऐसे साधु-महात्माओं के ऐसे भावों के कारण किसी भी नवयुवक

वा वर्त्तमान समय के मनुष्य का ध्यान इस विद्या पर नहीं गया। यथार्थ में, ऐसी दशा में, लोगों का विश्वास होना भी कठिन है।

अब आवश्यकता है कि, योग को श्रेणीवद्ध वर्त्तमान साँचे में ढाला जाय। देश, जाति व राष्ट्र की उन्नति में इससे सहायता ली जाय। योग मनुष्य के हृदय को विस्तृत करता है। उदार मनुष्यमें स्वार्थ या व्यापार-बुद्धि नहीं होती—जिस में व्यापार-बुद्धि नहीं है, वह समाज या राष्ट्र की सेवा कर सकता है। हमारी यह इच्छा है कि, जहाँ से इस विद्याका प्रकाश हम को मिल सके—हम उसको एकत्रित करें और सर्व्वसाधारण के हितार्थ प्रकाशित करावें। इस पुस्तक में योगाश्रमके आचार्य्य गोसाईं स्वामीदयालजीकी योगशिक्षाओं से अधिकांश में सहायता ली गई है। इस का कुछ अंश स्वामी विवेकानन्द के राजयोग से भी लिया गया है। यदि हमारे पाठक इन साधनों को करते रहेंगे, जिन में किसी प्रकार का भय भी नहीं है, तो आगे वे इस बात को भली भाँति समझ जावेंगे कि "योग-विद्या" देश के लिये क्योंकर हितकर सिद्ध हो सकती है। जब तक आप इस के साधनों को पूरा करेंगे, तब तक आप को "योग-विद्या और उस का समाज से सम्बन्ध" इस विषय पर दूसरा ग्रन्थ भेंट किया जायगा।

छिन्दवाड़ा
(मध्यप्रदेश)

विनीत—
ब्रजमोहनलाल वर्म्मा।

नोट—इसका कुछ अंश पहले 'योगसार भाग १' के नामसे छप चुका है और सोऽहम अलग ट्रैक्ट-रूप में छपा कर मुफ्त बँटवाया जा चुका है इन दोनों पुस्तकोंका वर्णन करते हुए मैं छिन्दवाड़ा-निवासी मुन्शी तिलोकचन्दजी को और पं० शिवप्रसादजी तिवारी को धन्यवाद देता हूँ। मुन्शी तिलोकचन्दजी के ही विशेष व्यय से योगसार प्रकाशित हो सका था और पं०शिवप्रसादजी तिवारी ने सोऽहम की कापियाँ अपने व्ययसे छपा कर मुफ्त बँटवाई थीं। अतएव ये दोनों सज्जन हमारे और हमारे पाठकों की कृतज्ञता क भागी हैं। अन्त में, मैं बाबू हरिदासजी वैद्यको भी धन्यवाद देना चाहता हूँ, जिन्होंने इसे प्रकाशित करके पुण्य-लाभ किया।

तृतीय संस्करणकी भूमिका।

आज मैं सहर्ष अपने पाठकों के सामने ब्रह्म-योग-विद्या का तीसरा संस्करण लेकर उपस्थित होता हूँ। गत आठ मास में ही इसका दूसरा संस्करण हाथों-हाथ बिक गया। प्रेमी पाठकों ने इसे हृदयसे अपनाया, इस से बढ़कर पुस्तक की उपयोगिता का और मैं कौनसा प्रमाण दे सकता हूँ। जिन-जिन योग-प्रेमियोंने मुझ को पत्र लिखनेकी कृपा की, उन्हें भी यथाशक्ति मैंने सन्तोष-पूर्वक उत्तर दिया। योग के गम्भीर विषयों पर मेरे पास जो पत्र आये, उनके लेखक महाशयों को मैंने स्वामीदयालजी महाराज का पता बतला दिया, क्योंकि उन्होंने इस पुस्तकके सब साधन सिद्ध किये हैं।

इस पुस्तक में जितनी उपयोगिता है—वह सब श्री स्वामीजी महाराजकी कृपा और अनुग्रह का फल है। मैं स्वयं योगी नहीं हूँ, किन्तु योग-प्रेमी अवश्य हूँ। मैं अनेक दशाओं में अपनेको योग-भ्रष्ट कह सकता हूँ। मैंने योग के साधन किये और अवश्य किये, बहुत कुछ चमत्कारक घटनाएँ देखीं, योग से मेरे मनको

शान्ति मिली, विचार बहुत कुछ सूक्ष्म हुए, परन्तु मैं अपने को सफल योगी नहीं कह सकता और न मैं इस बात का दावा ही करता हूँ। योग सन्तोष की कुञ्जी है, शान्ति का समुद्र है, इसीलिए मैं इस ओर से कभी भी निराश नहीं हुआ। योग के नाते ही मैं दो चार पहुँचे हुए योगियों के दर्शन कर सका और उन की कृपाका पात्र रहा। बुद्धिसे योग का मर्म जान लेने से कुछ भी काम नहीं चलता।

इस संस्करणमें एक अत्यन्त उपयोगी विषयका आरम्भ किया गया है। वह "स्वरोदयशास्त्र" है। यह अति प्राचीन और स्वाभाविक विद्या है। इस पर योग-प्रेमियोंके अध्ययन और मननकी बड़ी आवश्यकता है। मुझे कुछ सज्जन ऐसे मिले, जो स्वरोदयशास्त्रके नियमित पालनको समयकी ख़राबी समझते हैं, परन्तु इसके विरुद्ध मेरा और स्वरोदय-प्रेमियोंका जो अनुभव है, वह इतनी ज़बर्दस्त शक्ति रखता है कि, साधारण तर्क-वितर्कोंपर केवल हँसी आती है। हाँ, मैं इतना अवश्य कहूँगा कि, इस विषय की पुस्तकें अपूर्ण हैं। ज्योतिष और स्वरोदय का जो सम्बन्ध बतलाया गया है, उस पर स्वतन्त्र ग्रन्थोंकी आवश्यकता है। यदि कोई महाशय इसके सम्बन्धमें जानते हों, तो कृपया मुझे बतलाने की कृपा करें।

दूसरे, इसमें सिद्धि और स्वार्थ का जो प्रश्न उपस्थित किया गया है, वह साइन्स की उपयोगिता को कम करता है। 'स्वरोदय' शरीरके सम्बन्धमें शारीरिक साइन्स है, और

अध्यात्म-विषयमें आध्यात्मिक—इसमें स्वार्थ को जगह नहीं है। तीसरे, यह बड़ा कठिन प्रश्न है कि, मनुष्य स्वतन्त्र है या भाग्यसे ही इसका निपटारा होता है। यदि भाग्यसे निपटारा होता है, तो पाप और पुण्य दोनों का मनुष्य ज़िम्मेवर नहीं है। स्वरोदय से तो मनुष्य एक दशा में भाग्याधीन ही है।

ये कठिनाइयाँ मैं इसलिए सामने उपस्थित कर रहा हूँ कि, इस विषयमें वाद-विवाद, तर्क और अन्वेषणकी बड़ी आवश्यकता है। इसमें सन्देह नहीं कि, इन प्रश्नों और शङ्काओंके रहते हुए भी जो इस विद्यासे ज़रा भी परिचित है, वह इसकी उपयोगिताको भली भाँति समझता है और उसको इसमें—यदि पूर्णांशमें नहीं तो अधिकांशमें—सत्यता अवश्य प्रतीत होती है।

मुझे आशा है कि, यह पुस्तक जिन लोगोंके लिए लिखी गई है, उनके लिए मार्गप्रदर्शक और सच्चे सहायकका काम देगी। प्रत्येक मनुष्यको अधिकार है कि, वह इसकी भूलें मुझको बतलावे। वे सधन्यवाद स्वीकृत होंगी और चौथे संस्करणमें निकाल दी जावेंगी।

छिन्दवाड़ा

विनीत—

कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा
सम्वत् १९७५
(१८—११—१९)

बृजमोहनलाल वर्मा।

योगाश्रम।

स्थान—हरिपुर, ज़िला हज़ारा, पंजाब।

हसन-अब्दाल-निवासी योगिराज गोसाईं स्वामी-दयालजी के शुभ सङ्कल्प से उपरोक्त संस्था आज से बहुत वर्ष पहले स्थापित हुई; परन्तु उसका काम, जिस तरह कि हमलोग चाहते थे, न चल सका। कुछ तो विद्यार्थियों का ही दोष था, कि वे निश्चय-पूर्व्वक कभी भी साधन न कर सके और कुछ हमारी आर्थिक स्थिति का; तथापि हमने इसे अब हरिपुर में हटाकर, फिलहाल, कार्य्यारम्भ कर दिया है। स्वामीजी की इच्छा है कि, यह एक विश्वविद्यालयकी हैसियत में खोला जाय, जहाँ विद्यार्थीगण आकर राजयोग, हठयोग, मानसिक योग इत्यादि-इत्यादि शाखाओं का साधन करें और इसके साथ ही वेदान्त, सांख्यादिक दर्शनों का अभ्यास करें, जहाँ धर्म के साथ वैद्यक, कला-कौशल और वर्तमान कालकी प्रचलित विद्याओं का भी अध्ययन कराया जावे; अर्थात् तक्षशिला और नालिन्द

के प्राचीन विश्वविद्यालयोंके समान, हमारे विश्वविद्यालय में भी, हर प्रकार की शिक्षा दी जावे।

इसी उद्देश्यकी पूर्ति के लिए श्रीमान् स्वामीजी काश्मीर मे भ्रमण कर रहे हैं। वहाँ की धार्मिक प्रजा और महाराजा साहब काश्मीर दोनों ही उनके उद्देश्यको श्रद्धा की नज़रसे देखते हैं। आशा है कि, समय आने पर यह विद्यालय अपने ढँगका नया और अद्भुत स्थापित हो जायगा। जब तक इस महत् कार्य्य में देर है, तब तक पाठकों से निवेदन है कि, यदि वे योग और मैस्मरेज़मादिक विषयोंको सीखना चाहें, तो डाक द्वारा सीख सकते हैं। इसके लिये केवल एक वर्ष तक १) और ॥) माहवार फीस ली जाती है। जो बिलकुल निर्धन हैं या साधु संन्यासी हैं, वे मुफ़्त में शिक्षा पा सकते हैं। उनको मैस्मरेज़मके क़ीमती सामान भी मुफ्त मिलते हैं। जिन्हें ब्रह्मज्ञान प्राप्त करना है, वे स्वामी जी से स्वयं मिलें। हमें विश्वास है कि, उनके दर्शन से आपको ख़ास आनन्द आवेगा।

मैनेजर—

योगिराज गोसाईं स्वामीदयाल
अधिष्ठाता योगाश्रम ।

Narsingh Press, Calcutta.
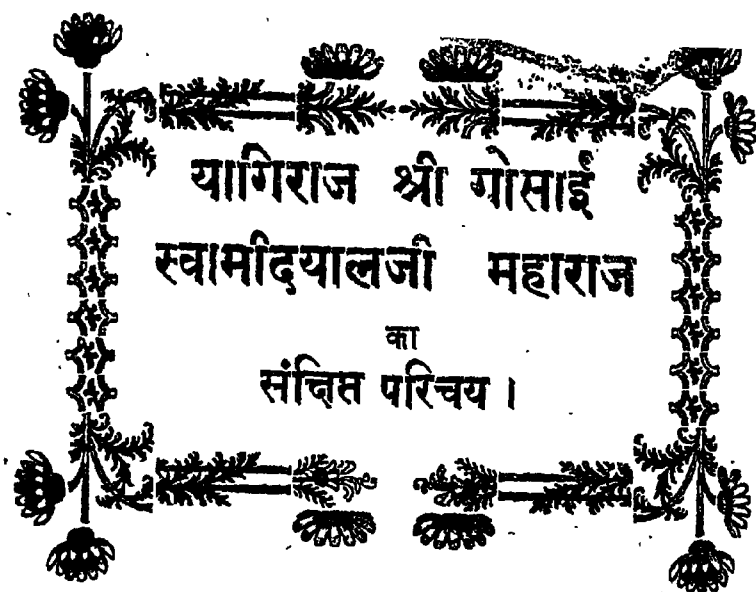
योगिराज श्री गोसाईं स्वामीदयालजी महाराज का संक्षिप्त परिचय।

मुझे बाल्यावस्थासे ही साधु-महात्माओं के दर्शनों की उत्कट अभिलाषा बनी रहती थी। १२ वर्ष की अवस्था में, मैंने एक रात्रि को यह स्वप्न देखा कि, मैं रेल पर सवार हो, हसन-अब्दाल (ज़िला रावल-पिण्डी) चला जा रहा हूँ। स्टेशन पर पहुँच कर मैंने बड़े चौड़े प्लेटफार्म देखे। मैं एक छोटे नगर का निवासी हूँ। वहाँ पर उस समय रेल आगई थी, परन्तु मैंने बड़ी लाइन के स्टेशन नहीं देखे थे। जो मुझे मिलता, उसी से मैं स्वामी-दयालजीका पता पूछता। एकने मुझको उनका आश्रम और रहनेका मकान बतला दिया। मैं उनके पास गया। वे मुझसे बड़े प्रेमसे मिले। मेरे साथ बाहर घूमने चले गये।

स्टेशनके पास एक ऐसे स्थान में पहुँचे, जहाँ पर कि एक छोटासा कमरा बना हुआ था। वहाँ वे एक कुर्सी पर बैठ गये और मैं एक स्टूल पर। उन्होंने मुझे योगदर्शन का पहला सूत्र समझाया। उसके बाद मेरी आँख खुल गई।

योगिराज का यह पहला परिचय है। उनका नाम मैंने अवश्य सुना था। मेरे हृदयकी धारणा सम्भवतः ऐसी ही हो, जिससे मुझे इस प्रकारके स्वप्न आये हों, यह बहुत कुछ सम्भव है। परन्तु जब मैं १८१२ में हसन-अब्दाल गया, तब मेरे आश्चर्य्य की सीमा न रही। मेरे लड़कपनके स्वप्नमें बहुत कुछ सत्यता थी। उसी समय से मैं स्वामी जी का अनन्य भक्त बन गया। बहुत काल तक तो अन्धविश्वास से या असीम प्रेम के कारण उनकी मूर्त्ति मेरी आँखों में झूलती रही। मैंने सैकड़ों बार उनके दर्शन स्वप्न में किये। जिस दिन स्वामीजीका पत्र आनेवाला होता था, उसकी पहली रात्रिको मैं स्वप्नमें देखता था कि, मेरे पास पत्र आगया है। कभी-कभी जिस दिन मेरे लिए वे हसन-अब्दालसे पत्र लिखते थे, उसी दिन रात्रिको स्वप्नसे मुझे मालूम हो जाता था कि, आज पत्र लिखा जा रहा है। मैं परीक्षार्थ अपने कई मित्रों से कह दिया करता था कि, स्वामीजी का पत्र आज आवेगा या पाँचवें दिन। बहुत दिनों तक ऐसी ही दशा रही।

जब मैं सन् १९१२ में हसन-अब्दाल गया, तो वहाँ मुझे उनके विरोधी मनुष्यों से भी मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

उनमें अधिकांश सिक्ख और आर्य्य-समाजके मेम्बर थे। मुझे उनकी ज़बानी स्वामीजीके विरुद्ध बहुतसी बातें सुनने का मौक़ा मिला। परन्तु उन महाशयों के विषयमें जब मैंने पता लगाया, तो मालूम हुआ कि वे स्वयं बहुत से ऐबोंमें फँसे हुए हैं और योगके मर्मको बिल्कुल ही नहीं समझ सकते। जब मैं लाहोर आया, तब भी बहुतसे लोगोंसे मुलाक़ात हुई। प्रसिद्ध-प्रसिद्ध उर्दू पत्रोंके सम्पादकोंसे भी मैं मिला। उन्होंने भी बहुतसे गुण और अवगुण स्वामीजीके बतलाये। परन्तु सबने यह स्वीकार किया कि,वह मेस्मरेज़मका ज़बर्दस्त जाननेवाला है। ख़ैर, इसीसे मुझे तसल्ली हुई। मेरे पास उनपर विश्वास करनेको इतनी अधिक सामग्री है, कि मैं शुद्ध हृदय से, न कि हठ-धर्म से, कहता हूँ कि शायद ही कोई उनका दो चार दिनका मुलाक़ाती या इधर-उधरसे उनके सम्बन्ध में कुछ सुनकर उनसे परिचित पुरुष मेरे विश्वास को डिगा सके।

स्वामीजी बाल्यकालसे ही मातृ-पितृ-विहीन हैं। इटावे के प्रसिद्ध संन्यासी स्वामी ब्रह्मनाथजी महाराजसे मैंने सुना था, कि जिस वंशमें ब्रह्मज्ञानी उत्पन्न होता है, वह कुल या तो बिल्कुल नष्ट हो जाता है या सदा हरा-भरा रहता है। यह श्रेष्ठ जीवनकी एक असाधारण दशा है। यह कथन हमारे स्वामीजीके सम्बन्धमें पूर्णतया घटित होता है। स्वामीजीने कहीं भी नियमित शिक्षा नहीं पाई, परन्तु साधारण हिन्दी,उर्दू और पञ्जाबी वे सीख गये। उनके एक साथीने,जो

मुझे लाहोरमें मिला था और देव-समाजका उपदेशक था और संन्यास लिये हुए था, बतलाया था कि श्री स्वामीजी लड़कपन में मेरे साथ रहे हैं। उस समयसे १८ वर्ष की अवस्था तक उनके विचारमें योगसिद्धि और करामातकी प्रधानता थी। यह बात यथार्थ में सत्य है। यद्यपि वह संन्यासी स्वामीजी के उद्देश्य से प्रतिकूल था और उसे योग में कोई तत्व नहीं दिखता था, तोभी उसने अपने सरल हृदयसे यह सब स्पष्ट बतलाया।

१८ से २४ वर्ष की अवस्था तक इन्होंने योगका प्रसिद्ध साधन 'छाया पुरुष' सिद्ध किया और समाचारपत्रोंमें विज्ञापन दिया कि, मैं अपनी मृत्यु का हाल ६ मास से पहले ही बतला सकूँगा; इसी प्रकार दूसरे की मृत्युका हाल भी मैं बतला सकता हूँ। इसी अवसर पर, इसी शुभ घड़ीमें, उन्हें स्वामी देवराजजी समर्थमार्गी के दर्शन हुए। वे उन्हें जङ्गल में ले गये। दो वर्ष अपने साथ रक्खा। जो कुछ योग और वेदान्त की शिक्षा दी, उससे स्वामीदयालजीके जन्ममें एकदम परिवर्तन हो गया। श्रीस्वामीजीने "राज-योग सोसाइटी" नामक एक संस्था क़ायम की। पहले-पहल उनके विचारका क्षेत्र "सिद्धियों" की तरफ़ झुका हुआ मालूम होता था। उसी समय स्वर्गीय माष्टर अरोड़ाराय, रावलपिण्डी-निवासीके साथ मेस्मरेज़म, आग पर नंगे पैर चलने और लोगोंको चलाने इत्यादिकके बहुतसे चमत्कार उन्होंने लोगों को बताये। "राजयोग

सोसाइटी" का काम इतना श्रेष्ठ था—उसके उद्देश्य इतने गम्भीर थे कि, यदि उसका काम चलता रहता, तो भारतवर्ष की आध्यात्मिक उन्नति में बहुत कुछ सहायता मिलती। १९०५ में, इस सभाके ४००० मेम्बर थे। इस सभाकी ओर से 'जामये-उलूम' नामका एक उर्दू पत्र साप्ताहिक रूपमें प्रकाशित होता था, जिसकी ग्राहक-संख्या भी ४००० से ऊपर थी। उसी बीचमें स्वामीजीने नोटिस दिया था कि, हमको ७००० साधुओं की ज़रूरत है, जिनकी जीविका का प्रबन्ध "राजयोग सोसाइटी" करेगी। यह कितना कठिन, श्रेष्ठ और सराहनीय कार्य्य था, पाठक स्वयं अनुमान कर सकते हैं।

परन्तु यह कार्य्य एकदम रुक गया। धूर्तों और विरोधियोंकी अभिलाषा पूर्ण हुई। रावलपिण्डी-रायट—बलवेके केस और राजयोग सोसाइटी-लाटरीकेसमें स्वामीजीको १॥ वर्ष का कारावास हुआ और सोसाइटी का काम रुक गया। लाहोर-पुलिससे सभाके प्रत्येक मेम्बरके नाम एक-एक छपा हुआ पत्र गया, जिसमें सोसाइटी के सम्बन्धमें बहुत से प्रश्न थे।

कारावास से छूटनेके बाद बहुत से पुराने मेम्बर डर गये और योग-प्रचारके काममें बड़ी-बड़ी बाधायें उपस्थित हुईं। परन्तु, अन्तमें 'योगाश्रम' नामक संस्था खोल कर स्वामीजीने पुनः अपने कार्यका प्रचार करना आरम्भ किया।

कारावास से योग-प्रचारमें बहुत कुछ हानि हुई, परन्तु

स्वामीदयालजीको अपनी उन्नति में बहुत काम बाधा पड़ी। इसके बाद हमने उनको दिन-दूनी रात-चौगुनी उन्नति करते देखा। इस घटना के पूर्व वे लोगोंको सिद्धियाँ सिखलाया करते थे, किन्तु अब उनकी वृत्ति लोगों में पवित्र वेदान्त और योगके प्रचारकी ओर लग गई। अब स्वामीजी महाराजकी उत्कट इच्छा है कि, एक प्रधान 'योगाश्रम' भारतवर्षके केन्द्रमें खोला जावे और उसमें नियमित रीतिसे योग और वेदान्त की शिक्षा दी जावे। परन्तु अभी तक कोई सज्जन इस कार्य के लिए पूर्णतया तय्यार नहीं हैं; यद्यपि श्री महाराज साहब काश्मीर इस कार्य में योग देना चाहते हैं।

स्वामीदयालजी उर्दू के सुयोग्य लेखक हैं। योगके विषय को जिस गम्भीरता और सरलता-पूर्वक वे समझाते हैं, ऐसा शायद ही अन्य कोई समझाता हो। उन्होंने 'ख़ज़ानये-करामात' के पाँच भाग उर्दू में लिखे हैं, जिनमें भूमिका तो अति गूढ़ विषयोंसे परिपूर्ण है, परन्तु बाकी लेख मैस्मरेज़म आदिके हैं। छठवें भाग से उन्होंने वेदान्त पर अपनी लेखनी उठाई है और अब तक चार अति गहन पुस्तकें उन्होंने लिखी हैं, जिनमें वेदान्त और योग के सिद्ध उपदेश अङ्कित हैं। अन्तिम पुस्तक का नाम 'अमरकथा' है। उनका मुख्य सिद्धान्त है, कि योग पढ़ने का विषय नहीं, किन्तु करनेका विषय है। बिना योग के वेदान्तका अनुभव या आत्मसाक्षात्कार होना—अत्यन्त असम्भव और कल्पित है।

उन्हें पुस्तक-पढ़े वेदान्तियों पर दया आती है। छठी पुस्तक "समपथी" यदि अँगरेज़ीमें होती, तो इसके लेख योरुपके फ़िलासफ़रोंके मुक़ाबलेके समझे जाते।

मुझे दो तीन बार उनके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनसे मिलकर जो आनन्द मुझे प्राप्त हुआ, वह अवर्णनीय है। यद्यपि उनके पास स्वार्थसे खिँचे हुए बहुतसे मनुष्य आया करते हैं,परन्तु जो निःस्वार्थभावसे उनसे मिलेगा,उसे अधिक सन्तोष होगा। स्वामीदयालजी महाराजको आप अति सरल, अति मधुर और अति गम्भीर मनुष्य पायेंगे। परन्तु बहुतसे स्वार्थरत् मनुष्य उनको साफ़ धोका दे जाते हैं। स्वामीजी महाराज 'कर्म फल-सिद्धान्त' के बड़े पक्षपाती हैं। उनका विश्वास है कि,जो जैसा करेगा, वह वैसा पावेगा। रूपड़ ज़िला अम्बालाके आर्य्य-समाजने उन पर १९१३--१४ में एक घृणित मुक़द्दमा चलाया था। मैंने स्वयं हिन्दीपत्रोंमें नोटिस दिया था कि, योगाश्रमके कन्या-विद्यालयके लिए एक योग्य पाठिकाकी आवश्यकता है। रूपड़ आर्यसमाजकी एक अध्यापिका वहाँ जानेको राज़ी हुई। वेतन आदि निश्चित होने पर वह वहाँ चली गई। इधर आर्य्य-समाज रूपड़के कतिपय मेम्बरोंने उसके पिताको भड़काया कि, तुम पुलिसमें रिपोर्ट करदो कि, स्वामीदयालजीने लड़की को भगा दिया है। यद्यपि अध्यापिकासे सब ठहराव-वेतनआदि-का पत्रव्यवहार-मेरे द्वारा हुआ था, परन्तु वह रिपोर्ट होगई। स्वामीजी किसी स्थान पर प्रचार करनेके लिए गये हुए थे,परन्तु

आर्य्य-समाजके मुख्य पत्र "प्रकाश" ने यह झूठी खबर छपा दी कि स्वामीदयाल भाग गये हैं। यह कल्पित बात थी। पेशी पर स्वामीजी हाज़िर हो गये और जब उस विधवाने अपना इज़हार देना आरम्भ किया और स्वामीजी पर कुछ लाञ्छन लगाने लगी, तभी वह भरी अदालतमें बेहोश होकर गिर पड़ी। पेशी बढ़ाई गई। दूसरी बार भी अदालतमें अपना इज़हार देते-देते वह इसी प्रकार बेहोश होगई, परन्तु आर्य्यसमाज अपनी ज़िद पर क़ायम रहा। तीसरी बार वह स्त्री बेहोश होकर मर गई। इस अत्यन्त चमत्कारक घटनाको देखनेके लिए, उन के कुछ अङ्गरेज़ शिष्य और अम्बाला छावनीके कुछ अंङ्गरेज़ पुरुष और स्त्री दोनों आये थे। इसी समय मैंने यह सब हाल लाला लाजपतरायजीको लिखा। आर्य्य-समाज लाहोरका उत्तर आया कि, आप विश्वास रक्खें, आर्य्य समाजका एक व्यक्ति भी कभी न्यायके विपरीत नहीं चलेगा !!! इस घटना का सवि-स्तर वर्णन. मुझे रूपड़ के एक महाशय सदा लिखते रहे। स्वामीजी से पूछने पर उन्होंने लिखा कि, "पापमें स्वयं मनुष्य को नष्ट करने की शक्ति रहती है। जब पाप प्रबल हो जाता है अथवा पाप या असत्य-विचार दृढ़ हो जाता है, तब वह शीघ्रही फल देता है और मनुष्य नष्ट हो जाता है।"

स्वामीजी निरन्तर दो वर्षों से भ्रमण कर रहे हैं। शायद एक दो दिनके लिए दो बार वे "हरिपुर" ज़िला हज़ारा आये हैं, जहाँपर कि आजकल 'योगाश्रम' स्थित है। स्वामीजी कई

पत्रोंके सम्पादक रहे हैं। जामये-उलूम, कलङ्कीअवतार-पत्रिका, खुदा, योगी आदि कई पत्र उन्होंने बड़ी योग्यता से चलाये; परन्तु इस ओर लोगोंकी रुचि कम देख, वे शान्त हो गये। आप अभी तक मेस्मरेज़म और योगके अद्भुत चमत्कार कभी-कभी प्रसन्नचित्त हो बतला देते हैं। दूसरेके मनके विचारोंको पढ़ना, तो मानो एक अति साधारण बात है।

इस समय इनकी अवस्था ४५ वर्ष की होगी। आप बहुधा मग्नावस्थामें रहते हैं। उस समय एकान्त सेवन के लिए जङ्गलोंमें रहते हैं। कभी-कभी ग्राम-ग्राममें योगका प्रचार करते हैं। बीमारों का योग-बल से और औषधियों से मुफ्त इलाज करते हैं।

आपके मस्तक की बनावट जिस प्रकार पवित्र और श्रेष्ठ वेदान्तकी ओर झुकती है; उसी प्रकार आप कला-कौशलमें भी दख़ल रखते हैं। कलकत्ता पेटण्ट आफिस से आपको एक मेशीन पेटण्ट हुई है। स्वामीजीके गृहस्थकालके दो पुत्र हैं, जो किसी आश्रममें शिक्षा पाते हैं।
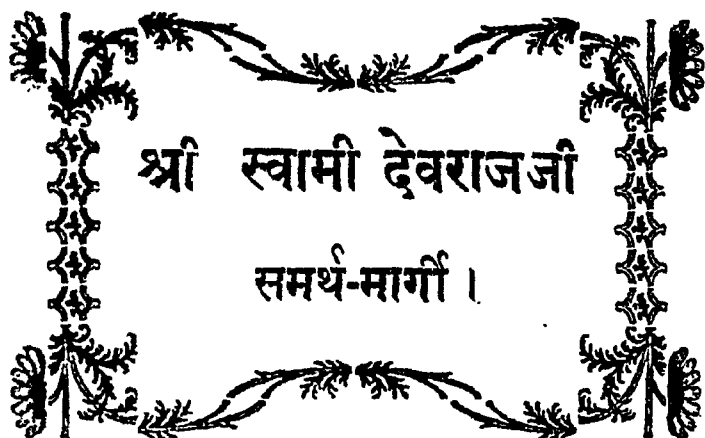
मेरा विश्वास है कि, ऐसे महात्मा बहुत ही कम प्रकट होते हैं। वेदान्त की अन्तिम दशामें योगी किसीके भी काम का नहीं रहता, उसकी सब इच्छायें नष्ट हो जाती हैं, संस्कार लोप हो जाते हैं, कुछ करना-धरना शेष नहीं रहता, योगी अपने अनन्त ज्ञानस्वरूपमें लीन रहता है। ऐसी दशामें श्रीकृष्ण जैसे योगी यदि योग-रचित शरीर को धारण कर

संसारका उपकार कर सकते हैं, तो अभाग्यवश संसारी मनुष्य न तो उनके उद्देशोंको समझ सकते हैं और न उनकी शिक्षा ही ग्रहण कर सकते हैं। भगवान् कृष्णके जीवन-कालमें बहुत थोड़े मनुष्य—केवल इने-गिने मनुष्य ही—उनको असाधारण पुरुष समझते थे। यही हाल समय-समय पर हुए महात्माओं का है। यही हाल श्रीस्वामी जी का भी है। श्रीस्वामीजी महाराजके पवित्र उद्देशोंके लिए कुछ स्वार्थहीन मनुष्योंकी आवश्यकता है। मैं अपने पाठकोंसे अनुरोध करता हूँ कि, आप इनसे मिलकर एक बार तो ब्रह्मशक्तिके अनन्त-समुद्रकी कुछ छटा का दिग्दर्शन करें। आपकी आत्माको शान्ति मिलेगी और आप अपने जन्म को सफल कर सकेंगे। ऐसे महापुरुष बहुत ही कम मिलते हैं।

श्री स्वामी देवराजजी समर्थ-मार्गी ।

Narsingh Press, Calcutta.

श्री स्वामी देवराजजी
समर्थ-मार्गी।

स्वामी देवराजजी समर्थ-मार्गी आचार्य्य-योगाश्रमके गुरु थे। उनके शरीरान्तको केवल डेढ़ वर्ष हुआ है। भाग्यवश मुझे उनके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैं अन्तिम बार उनसे, सन् १९१७ के मार्च महीने की २१-२२ तारीखको, रावलपिण्डी जाकर मिल सका। २४ या २५ मार्च को उनका शरीरान्त हो गया।

स्वामी देवराजजी भारतवर्षके योगियों में प्रधान योगी थे। आप हठयोग और राजयोग दोनों का अभ्यास कर चुके थे। १४ वर्ष तक आप—सूर्य्योदय से सूर्यास्त तक—सूर्य्यकी ओर टकटकी लगाये देखते रहे। इस बीचमें उन्होंने कुछ खाया-पीया नहीं। रात्रिको समाधिस्थ हो जाते थे। इस प्रकार की अखण्ड तपस्या के कारण उन्हें रावलपिण्डी-निवासी "तपस्वी जी" कहा करते थे।

स्वामी देवराजजी के गृह, कुटुम्ब, जाति और वंशका कुछ भी पता नहीं चलता। वे पञ्जाब के रहनेवाले थे। पेशावरी और मिश्रित पञ्जाबी भाषा बोलते थे। उनकी दैहिक स्मृति बिलकुल नष्ट हो चुकी थी। मैं-तू के नाश होते ही—अहङ्कारके संस्कार भस्म होते ही—यह विचार उनके हृदय में नहीं आता था कि मैं कौन था, कहां रहता था, मेरे बाल्यावस्थाके साथी कहाँ हैं और वे कौन थे। स्वामी देवराज-जी साचात् ब्रह्ममूर्त्ति थे। परोपकार ही उनके जीवन का ध्येय था। निस्स्वार्थ परोपकार वे अपने योगरचित शरीर से निरन्तर किया करते थे। प्रायः पचास वर्ष तक वे रावल-पिण्डीमें रहे। पहले तो वे रावलपिण्डीके तपोवनमें रहते थे, पीछे राजा-बाज़ार में आ बसे। वहाँ दो महात्माओं की पुरानी समाधियाँ बनी हुई थीं। एक समाधि-मन्दिर में वे रहते थे। यद्यपि राजा बाज़ार उनके सामने बसा था, और पहले वह एक एकान्त स्थान था, परन्तु बादमें शोरगुलमें भी वे शान्ति-पूर्वक रह सके। ५८ वर्ष पूर्व वे एक बार गोदावरी का तीर्थ करने आये थे। उनके जन्मके सम्बन्धमें इतना ही पता लगता है।

बौद्धधर्म में उच्चतर प्राणियों की एक दशा है। उसे 'बुद्ध सत्त्व' कहते हैं। भगवान् बुद्ध उस दशामें बहुत जन्मों तक रह चुके हैं। इस दशा के बाद ही मनुष्य पूर्ण बुद्ध हो सकता है। स्वामी देवराज के तुल्य "बुद्ध सत्त्व"

के कार्य्योंके समान थे। केवल परोपकार में ही वे निरन्तर अपना समय बिताया करते थे। जिस दिन मैं रावलपिण्डी उनके दर्शनार्थ गया, उसी दिन वे एक सज्जन को, जो निरपराध था और किसी आफ़त में फँस चुका था, छुड़ानेका प्रयत्न कर रहे थे। उनका यह उद्देश्य दूर-दूर प्रसिद्ध था कि, जो कोई निरपराध हो, रोगी हो, आपत्ति में हो, मुझको सूचित करे। उसका सब दुःख दूर हो जावेगा। उस दिन मैंने देखा कि, वे सूर्य्यचक्र के कमल को बड़े ज़ोरों से घुमा रहे थे—प्राणशक्ति को आकर्षित कर रहे थे। कमरे में इस तरह आवाज़ आ रही थी, मानों बाहर कोई लड़का चकरी घुमा रहा है। मैं बाहर गया, परन्तु मुझे वहाँ कोई दिखाई नहीं दिया। स्वामी जी हँस पड़े। उन्होंने कहा, कि तुम किस चिन्तामें बैठे हो। मैंने अपना सन्देह बतलाया, उस पर वे हँसने लगे। उन्होंने षट्चक्रों का वर्णन किया और बतलाया कि, सूर्य-चक्रको घुमाना पड़ता है। शामको वह आदमी आया और उनको प्रणाम करने लगा। मालूम हुआ कि, वह छूट गया है। जब तक वे साधन करते रहे, तब तक उनका शरीर इतना गर्म रहा, मानो १०६ डिगरीका बुख़ार हो। सम्भव है कि, यह कठिन परिश्रम के कारण हो या इस कारण कि, योगी दूसरेके कष्टों को अपने ऊपर ले लेते हैं और उनका निवारण कर देते हैं।

भारतवर्षके विषय में जब-जब मैंने बातचीत की, तब-तब

वे कुछ शान्त रहे। ज़िद करनेपर "कर्मफल" केवल यही उत्तर दिया। परोपकार की कुछ घटनायें मुझे मालूम हैं। पंजाबमें १६ से १८ वर्षतक के लड़के बहुत गुम हो जाते हैं। न जाने इसका क्या कारण है। बहुत से सरहदी डाकुओंके हाथ पड़ जाते हैं और वे उन्हें मुसल्मान बना लेते हैं। इसी तरह एक सज्जनका एक लड़का गुम होगया। इनका नाम सुनकर वह इनके पास दौड़ा आया। इन्होंने कहा,—"जा, रातको स्वप्नमें तुझे संसार के भिन्न-भिन्न दृश्य दिखाई देंगे। किसी एक दृश्य में तेरा लड़का भी दिखाई देगा। उसको तू आज्ञा देना कि, तू तीन दिनके अन्दर वापिस चला आ।" उसे रात्रिको वैसे ही स्वप्न आये। एक स्थान पर उसने अपने लड़के को भी देखा। उसने स्वप्नमें आज्ञा दी। बस, तीसरे ही दिन लड़का अपने घर वापिस चला आया

जब य समाचार मुझे मालूम हुआ, तब मैंने पूछा कि योगी स्वयं ऐ . कर सकते हैं, तब उसको स्वप्न दिखाने और आज्ञा देने की क्या आवश्यकता पड़ी ? मुझे उत्तर मिला कि, योगीमें जो शक्ति है, वही शक्ति मूर्छित अवस्थामें प्रत्येक प्राणी में है। यदि उस शक्तिका सदाके लिए विकाश कर दिया जावे, तो वह सदा के लिए योगी बन सकता है। यदि थोड़े समयके लिए उसका विकाश किया जावे, तो उस समयके लिए और उस ख़ास काम के लिए उसमें योगी के बराबर शक्ति आ जाती है। इसलिए जो योगी निर्विकल्प

अवस्था में है, उसको स्वयं कुछ करना नहीं होता। दूसरों में भी वही भाव वह पैदा कर सकता है। स्वामी देवराजजी लोगोंकी सहायता केवल इसी सिद्धान्त पर किया करते थे।

मैं भी उनका चिरकृतज्ञ हूँ। १९१६-१७ में, ८ मास तक मैं एक विचित्र व्याधिसे पीड़ित था। मुझे बैठे-बैठे क्षण-भर में ग़श आ जाते थे और थोड़ी ही देर में शरीर शीतल हो जाता, नाड़ी क्षीण हो जाती और हृदय की चाल बढ़ जाती थी। यह व्याधि सम्भवतः प्लेग का टीका लगाने के कारण हुई थी और यह प्रत्येक मास की १६-१७ तारीख़ को होती थी। दो बार अनुभवी डाक्टर कह गये कि, रोगी असाध्य है। तब मैंने अपने एक परिचित, स्वर्गीय पिताजी के एक मित्र, से एक तार श्री स्वामी जी महाराज को दिल-वाया। रात्रि से ही मेरी बीमारी कम हो गई और मैं तीसरे दिन बाहर घूमने लगा। किसी प्रकार कमज़ोरी अवश्य रह गई थी। जब मैं १९१७ के मार्च महीने में Previous एम० ए० की परीक्षा के लिए प्रयाग गया, तब भी मुझे परीक्षा के एक दिन बाद बेहोशी हो गई, परन्तु शीघ्र आराम हो गया। १९-२० मार्च को मैं रावलपिण्डी गया। श्री महाराजने बड़ी प्रसन्नता प्रकट की और कहा कि, मैं तुम्हारी राह देख रहा था। जिस महात्माको महीनों खाने-पीने की परवा न थी और जिसको भोजन कराने और जिससे प्रसाद पानेके लिये सैकड़ों मनुष्य लालायित रहते थे, उन्होंने मेरा सब प्रबन्ध

बड़ी चिन्ता और फिक्र के साथ करके मुझे लज्जित किया। मैंने उनसे प्रार्थना की कि, महाराज मुझे योग का साधन करा दीजिए। उन्होंने कहा, तुम बड़ा अनियमित जीवन व्यतीत करते हो। इस अवस्था में इतनी बीमारी क्यों होनी चाहिए? वेदान्त में दृढ़ रहो। आत्मा मरती नहीं—न कभी बीमार होती। शरीर जड़ है, उसमें किसी प्रकार का रोग हो नहीं सकता; इस पर दृढ़ रहो,—कोई बीमारी न होगा। गीता का श्लोक सुनाया। नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि इत्यादि। तत्पश्चात् कहा कि, जब तुम यहाँ आये हो, तो अच्छे होकर जाओ। मैंने कहा, आपकी आज्ञा शिरोधार्य्य है।

उन्होंने कहा,—"अच्छा,काम-शान्ति-पूर्वक तुम एकाग्रचित्त होकर दूसरी समाधि में बैठ जाना। पूरे दो घंटे बैठना।" मैंने आपत्ति की कि, महाराज चञ्चल मन तो शान्त होता नहीं, फिर यह कैसे हो। तिसपर उन्होंने कहा,—"एं! मन एकाग्र नहीं होता, बराबर होगा।" इतना कहकर वे शान्त हो रहे। उसी चण मेरे विचारों का आना और जाना सर्वथा बन्द होगया। प्राय: १५-१६ मिनिट तक यह दशा रही। यह जीवनका पहला अनुभव था कि, मुझे मालूम हुआ, कि मन भी शून्य और एकाग्र हो सकता है। उसके बाद वे पुनः हँसने लगे। योगीका प्रभाव छूट गया। अपनी शक्ति उन्होंने खींच ली और मैं पुन: अपने आस-पास प्रकृतिके भेदों को देखने लगा। दूसरे दिन मैं नियमित समय पर बैठा। दो

घण्टे में २० मिनिट कम रह गये थे कि, मैं उठ आया। स्वामी-जी ने अपने कमरे में से कहा,—"अरे! २० मिनिट पहले क्यों उठ आया !!! उसके बाद से मैं आजतक स्वस्थ हूँ और जिन्होंने मुझे पहले देखा था और अब देखा है, उनको स्वयं मेरे शारीरिक स्वास्थ्य में बहुत कुछ तब्दीली मालूम होती है। हृदय-रोग आदि सब रोग नष्ट हो गये। रोगोंकी स्मृति भी प्रायः नष्ट हो गई।

स्वामी देवराज जी प्रसिद्ध विद्वान् थे। साधु-सन्तों से वे वेदान्त, उपनिषद्, गीता और सिक्खोंके धर्म्म-ग्रन्थोंपर संस्कृत और पंजाबीमें वार्तालाप किया करते थे। रात-रातभर श्लोकों की वर्षा होती रहती थी। उनके कहे हुए बहुत से श्लोक अप्रकाशित थे। किसी ने भी उनको ग्रन्थके रूपमें लानेका प्रयत्न नहीं किया। स्वामी रामतीर्थ जी महाराज के शिष्य श्रीयुत पूरणजीके साथ स्वामीजी छः मास तक रहे हैं। पूरणजी उन्हें देहरादून ले गये थे। उनको इनका विशेष हाल अवश्य मालूम है।

समाधि लेने के पूर्व ही स्वामीदयाल जी काश्मीर से बिना बुलाये उनके पास आगये। उस समय मैं भी पहुँच गया। मैं उनके दर्शन करके और ३ दिन पास रहकर प्रयाग वापिस आने लगा। कानपुरमें मुझे पत्र मिला कि, "आपके परम प्यारे स्वामी देवराजजी महाराजने एकाएक समाधि लेली।" स्वामी देवराज जी यद्यपि अब संसारमें नहीं हैं, परन्तु स्वामी-

दयालजी से अब भी लोग बहुत कुछ आत्मोन्नति कर सकते हैं। मुझे विश्वास है, कि स्वामी देवराज जी का वृत्तान्त और अक्षरशः सत्य वृत्तान्त सुनकर और उनका फोटो देखकर बहुत से सज्जन यह सोचते होंगे कि, यदि हमें भी दर्शन हो जाते तो अच्छा होता। इसी प्रकार स्वामी रामतीर्थ के जिन्होंने दर्शन नहीं किये, वे वर्षों पछताते रहे। इसलिए सत्सङ्ग का अवसर जब मिले—जब कभी किसी महात्माका पता लगे—उसे हाथ से न जाने देना चाहिए।

स्वामी देवराजजी की मूर्त्ति दर्शनीय है, इसलिए वह बड़े परिश्रमसे प्राप्त करके, इस संस्करण में दी जा रही है कि; योग-प्रेमी दर्शन-लाभ करें। जिस समय यह फोटो ली गई थी, उनकी अवस्था ८७ वर्षके क़रीब थी। उन्होंने ९९ वर्ष की अवस्था में समाधि ली।

योग ।

योगका अर्थ मेल करना है, अर्थात् चित्तको सब प्रकारकी वृत्तियों से हटाकर अपने स्वरूप में स्थित होने का नाम योग है। योगदर्शनका पहला सूत्र यह है,—"योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः" अर्थात् 'योग' चित्त की वृत्तिके निरोधको कहते हैं। हर एक पदार्थ के देखने सुनने-सोचने से जो प्रभाव चित्त पर पड़ता है, उसका नाम वृत्ति है। उसके निरोध करने का नाम ही 'योग' है। पहले-पहल बाहरी पदार्थों का असर इन्द्रियों पर पड़ता है। वहाँ से मस्तक द्वारा मन पर आता है, वहाँ से बुद्धि उसका निर्णय करती है, फिर वह कहीं आत्मा तक पहुँचता है; या यों समझो कि आत्मा का सम्बन्ध मन और बुद्धि से, मन का इन्द्रियों से और इन्द्रियों का विषयों से है।

नेत्र एक इन्द्रिय है। एक टोपी सामने पड़ी है। आँखने

उसको देखा, झट उसका अक्स आँख की पुतली पर पड़ गया, उसी दम आँख से मस्तक में होकर चित्त पर उसका अक्स खिंच जाता है। अस्तु इन्द्रियोंके विषयों से जो प्रभाव चित्त पर पड़ता है, उसी को "वृति" कहते हैं। इसी वृत्ति के निरोध का नाम "योग" है।

जब नाश नहीं, तो अविनाशी कैसा और साक्ष नहीं तो साक्षी कैसा ? जब संशय हो तो उसे दूर करना चाहिये ; जब संशय है ही नहीं, तो दूर करना किसका ? जहाँ बीज नहीं वहाँ फल-फूल-वृक्ष कहाँ ? पाप नहीं तो पुण्य कहाँ ? दुःख नहीं, फिर सुख कहाँ ? तब दृष्टा, दृश्य, दर्शन कहाँ ? जब तक वृत्ति का उठना बाकी है, पूर्ण शान्ति कहाँ ? जब तक यह विचार नहीं है कि मैं नाश से रहित हूँ, मैं ब्रह्म हूँ, तब तक वह ब्रह्मपद कहाँ ? ये शब्द तो साफ़ कमी दर्शाते हैं। "भ्रम" की स्मृतिके बीज शेष हैं।

जबतक चित्त की वृत्ति का निरोध नहीं कर लिया जाता, चाहे वह किसी भी दशा में क्यों न हो, तब तक मनका विषय वर्तमान है। इनका दृष्टा अर्थात् आत्मा अपना स्वरूप वैसा ही बना लेता है, जैसी कि मनकी वृत्ति रहती है और उन्हीं वृत्तियों के अनुसार सुख और दुःखका अनुभव होता है। जिस प्रकार चुम्बक-पत्थर अपनी शक्ति से पासके रक्खे हुए लोहे को खींच लेता है; उसी प्रकार वृत्तियाँ, जब कि वे रोकी नहीं जातीं, विषयों को अपनी ओर खींचती हैं। आप जानते

हैं कि, जिस समय तक पानी की लहरें उठ रही हैं, उनमें किसी पदार्थ का प्रतिबिम्ब दिखाई नहीं दे सकता और जब तक आईना—दर्पण—मैला रहता है, कोई भी अपने मुँह को उसमें नहीं देख सकता; इसी प्रकार जब तक मनका प्लेट (तख्ता) साफ और दर्पण के समान नहीं हो जाता, तब तक हम अपने स्वरूप का अनुभव करने से वञ्चित रहते हैं।

इसी एकाग्रता का नाम 'योग' है। मैस्मरेज़म, हिप्नाटिज़्म और आकर्षण-विकर्षण सब इसकी ही शाखायें हैं।

ऐ भारत! तूने उन्नति की तो हद दर्जे की और अवनति की तो वह भी हद दर्जे की। कहाँ वह समय था, जबकि योगीश्वरों और मुनीश्वरों की कृपा से भारतवर्ष में योग का इतना प्रचार था कि, लोग यह प्रार्थना ईश्वर से करते थे कि, हमारा जन्म हो तो भारत देश में। आज इस पवित्र विद्या पर स्वयं भारतवर्ष के लोग ही विश्वास नहीं करते!

जिस समय कुरुक्षेत्र के युद्धस्थान पर कौरव और पाण्डव दोनों के बीच लड़ाई छन रही थी, तब सञ्जय हस्तिनापुर में बैठे-बैठे कुरुक्षेत्रके, मीलोंकी दूरीके, समाचार धृतराष्ट्र को सुना रहे थे। बताओ, उनके पास कौनसा टेलिग्राम था, जिसके सहारे पल-पल के समाचार वे देते रहते थे? सोचो और समझोगे, तो पता लगेगा कि, यह सारा भेद "योग" में था और है। जबकि अपने भाई-भतीजोंको लड़ाई के लिये तय्यार

खड़े देख कर, अर्जुन ने अपने शस्त्र फेंक दिये थे और निकम्मा बन बैठा था, तब कृष्ण भगवान् ने अर्जुन को अपना विराट स्वरूप दिखलाया और लड़ाईमें जो होने वाला था, सबका फोटो सामने खींच दिया, उसको प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर करा दिया ; जिसको देखकर अर्जुन को लड़ाईके लिये तैयार होना पड़ा। यह क्या था ? योगाभ्यास करो, तो तुम पर खुल जायगा। दो लेकचरर (उपदेशक) आपके यहाँ आये हुए हैं। एक, आध घण्टा बोलकर सैकड़ों को अपना बना लेता है; दूसरा वर्षों चिल्लाता है, परन्तु कुछ नहीं होता। कोई उसको सुनता ही नहीं। इसका असली कारण क्या है ? एक के विचार दृढ़ हैं, लोगों से कहने के पहले अपनी आत्मा से उसने सब कुछ कह दिया है ; उसकी आत्मा ने उसे सुन लिया है। उसके विचार पहाड़ से भी अधिक दृढ़ हैं, इसलिये वह दूसरों पर प्रभाव डाल सकता है। दूसरा उपदेशक अभी अपने आत्मा को ही सन्तुष्ट नहीं कर सका है। जो कुछ वह कहता है, उस पर उसका विश्वास नहीं है। तब भला वह दूसरों को कैसे विश्वास दिला सकता है ?

एक पहलवान में और एक कुली मज़दूर में क्या भेद है ? कुली दिन-भर मिहनत करता है, परन्तु वह पहलवान नहीं हो जाता। पहलवान केवल एक घण्टा व्यायाम करता है और वह दङ्गल में अपने बराबरी वाले को मार भगाता है। यह क्यों ? सोचो तो मालूम होगा कि, कुलीका ध्यान शरीरो-

न्नति की ओर उतना नहीं है, जितना कि पहलवान का। वह कसरत करते समय अङ्ग-अङ्ग पर अपनी विचारशक्ति की लहर भेजता है और सोचता है कि, मेरे ये-ये अङ्ग सुदृढ़ और बलवान हो रहे हैं। कुली मिहनत को बोझ समझता है; जहाँ मालिक आँखकी ओट हुआ कि, झट काममें आना-कानी करने लगता है।

विचार करते ही शत्रु मित्र हो जाता है। उसकी तरफ से बुरे विचार दूर कर दो, वह तुम्हारा मित्र हो जायगा। प्रेमकी लहरें यदि तुम दिलसे उठाओगे, तो निस्सन्देह साँप-बिच्छू भी अपने स्वभाव को छोड़ देंगे। शङ्करस्वामी वर्षों जङ्गल में पड़े रहे, परन्तु किसी भी घातक पशु-पक्षीकी हिम्मत न हुई कि, उनको रत्ती भर भी हानि पहुँचा सके। अमेरिका का प्रसिद्ध तत्वज्ञ एमरसन (Emerson) लिखता है कि, मेरा गुरु जिस कमरे में रहता था, उस कमरे में बर्रों का एक छत्ता लगा हुआ था। जिस समय वह सोता था, उसकी खाट पर बर्रें बैठी रहती थीं। जब वह चलता था, साँप तक उसके पैरों में लिपटते थे; परन्तु उसको हानि नहीं पहुँचा सकते थे; वह प्रेम की शान्त मूर्त्ति था। वह जीता-जागता शङ्कर था। वह प्रेम-युक्त विचार की शक्ति का नमूना है।

जिनका विचार है कि, दसवें द्वारसे पवन चढ़ाने से दुःख-सुख हटकर परमानन्द प्राप्त होता है, वे बड़ी भूल में हैं। यह आनन्द सङ्कीर्ण है। मन अभी साथ है। जगत्‌को दुःख-

भय जानकर और कायर बनकर वह भागता है। इन्द्रियोंको समेटकर सुरतको चढ़ाता है—अपने स्वरूप में लीन रहता है; परन्तु मन यहाँ पर भी नाश नहीं होता। यह बीज अवश्य लगेगा—संसाररूपी बीज कभी न कभी अवश्य लगेगा—तब इससे क्या वह लाभ हो सकता है जो—आँख खुली है, हाथ पैर काम कर रहे है, फिर भी आत्मा अपने में लीन है— इस जीवन-मुक्त दशासे प्राप्त होता है।

स्वामी दयानन्द, स्वामी रामतीर्थ, स्वामी विवेकानन्दजी आदि के पास क्या था कि, लोग उनके पीछे-पीछे फिरते थे और उनके एक-एक शब्द को बड़े ध्यान के साथ सुनते थे। स्वामी रामतीर्थ जब लेकचर देने के पश्चात् जङ्गलकी ओर चल देते, तो लोग भी उनके पीछे-पीछे चले जाया करते और स्वामी जी को प्रेमवश अद्वैत-मार्गपर अपना भाषण आरम्भ करना पड़ता था। स्वामीजी के पास सच्चे प्रेम की डोरी थी, जिसमें सब जानदार प्राणी बँधे हुए थे और चारों तरफ प्रेम ही प्रेम देखते-सुनते और अनुभव करते थे। मनुष्य को पशु-पक्षियों में सबसे ऊँचा दर्जा दिया गया है। परन्तु क्या इसका यह आशय है, कि मनुष्य अपने अधीन मूक पशु-पक्षियों को तङ्ग करे, बेजा दुःख देवे या क्रूरता से पेश आये? नहीं नहीं, उनके साथ हम मनुष्योंको दयासे बर्तना चाहिये, क्योंकि बेचारे हमारे अधीन हैं। मनुष्यको चाहिये कि उनके साथ ऐसा बर्ताव करे कि, जिससे उनको रत्तीभर भी कष्ट न हो;

फिर देखो, अदृश्यसे तुमको इसका क्या फल मिलता है। साथ-साथ यह तुम्हारा नैतिक कर्त्तव्य भी है।

जिस समय रेलगाड़ी हिन्दुस्थान में नहीं चली थी, यदि कोई मनुष्य उस समय आपको रेलगाड़ीके लाभ सुनाता और बतलाता कि, आग और पानी लाखों मन बोझ को मिनिटोंमें कहीं-से-कहीं पहुँचा सकते हैं—आदमियोंको अपने ऊपर सवार कराके, बड़े आरामसे, उनके वर्षोंके रास्तेको घण्टोंमें तय कर सकते हैं, तो आप उसको पागल और निरा मूर्ख समझते; परन्तु ये सब बातें ठीक थीं, जैसा कि आज हम देख रहे हैं।

ऐसेही, इस समयमें, जबकि हमारे ऋषियोंकी पहली विद्यायें गुम हो गई हैं—लोग उन सच्ची बातोंको भी स्वप्न-वत्—तिलिस्म—समझते हैं; यदि हम कहें कि पहलेके लोग वरुणास्त्र चलाकर जलकी मूसलाधार वर्षा करते थे, जिससे शत्रु-सेनामें जल-ही-जल हो जाता था या अग्नि-अस्त्र चलाते थे, जिससे सब लोग जलने लगते थे अथवा मोहनास्त्र चलाते थे, तो ये सब बातें आजकलके लोगोंको मनगढ़न्त मालूम होंगी अथवा हमने अपने पवित्र मार्ग—योगपर अवलम्बित होना छोड़ दिया है; इस कारणसे ये सब बातें हमारे ध्यानमें नहीं आतीं। यदि ज़रा विचार किया जाय, तो इसकी सचाई, आपसे आप, आपपर प्रकट हो जायगी। जबकि समस्त वायु-मण्डलमें जल के परमाणु भरे हुए हैं, तो यदि एक योगी अपने योगबल

से जलतत्वका ध्यान करके, आस-पासके परमाणुओंमें आकर्षण पैदा करे और पानी बरसावे, तो क्या उसके लिये यह कार्य कठिन है? ऐसा कोई स्थान नहीं, जहाँ बिजली न हो। यदि एक योगी या आकर्षणी-विद्याका प्रयोक्ता उसमें आकर्षण पैदा करके, उस बिजलीके सहारे, हज़ारों आदमियोंको बेहोश करदे, तो क्या यह असम्भव है? कदापि नहीं। ये सब बातें एक योगी के बायें हाथके खेल हैं। लोग हँसते हैं, जब उनसे कहा जाता है कि, अर्जुनके राजकुमार अभिमन्युने, गर्भस्थ दशा में ही, चक्रव्यूह-भेदन सीख लिया था और जब कि अर्जुनके और काममें लगे रहने के कारण कौरवोंने युद्धका सन्देसा भेजा, तो वही शूरवीर अभिमन्यु लड़ाईके लिए गया--परन्तु उस वीरशिरोमणिने गर्भमें व्यूहसे निकलने की विधि नहीं सुनी थी, इसलिये रणमें खेत रहा।

ये वे भेद थे, जिन्होंने भारतवर्षका सिर सारे संसारमें ऊँचा रखा। यह वह देश था, जहाँ माँके पेटमें ही लड़के योग्य और सुयोग्य बनाये जाते थे।

आज-दिन भी उसी तरह गर्भस्थ बालकको शिक्षा दी जा सकती है, यदि लोग योगका आश्रय लेवें और स्वयं योग्य बनें।

योग-विद्या का वेदान्त से सम्बन्ध।

यह चलता-फिरता खाता-पीता साढ़े तीन हाथ का शरीर है। इसे तो आप सब लोग जानते ही हैं, परन्तु एक सूक्ष्म शरीर और भी है, जो जन्म लेते और मरते समय भी आत्माके साथ रहता है। यह पाँच कर्मेन्द्रिय, पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच प्राण, मन और बुद्धि—ऐसी सत्रह वस्तुओंसे बना हुआ है। इस सूक्ष्म शरीर से जीवात्मा सूक्ष्म भोगों को भोगता है। तीसरा एक कारण-शरीर है, जिसमें सुषुप्ति—नींद—प्राप्त होती है।

इन सबके सिवा एक चौथा शरीर और भी है, जिसमें कि साधु-महात्मा लोग समाधि-अवस्थामें ब्रह्मानन्दमें मग्न रहते हैं। इन शरीरोंमें ही जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति व तुरीयावस्थाओं का मेल होता है। मनुष्य जाग्रत अवस्थामें स्थूल शरीरसे काम लेता है, स्वप्नमें सूक्ष्मसे। उस समय उन वासनाओं से, जो कि जाग्रतावस्थामें उसके चित्तमें पैदा हो चुकी हैं, स्वप्नमें वह नाना भाँति के ठाटबाट बनाता है। जाग्रतावस्थामें जबकि हमारी बुद्धि—रूप, रस, गन्धादि स्थूल पदार्थोंमें रहती है, तब आत्म को स्थूल का भोगनेवाला कहते हैं और जब आत्मा सूक्ष्म रचनामें मग्न रहता है, तब उसे सूक्ष्मका भोगनेवाला कहते

हैं। जाग्रतमें आत्मा स्थूलमें, स्वप्नमें सूक्ष्ममें और सुषुप्तिमें कारण-शरीरमें रहता है। असलमें आत्मा एक ही है, केवल उसके रहने के स्थान अलग-अलग हैं।

हमारा आत्मा पाँच कोषोंके अन्दर छिपा हुआ है। जबतक हम इन परदों के भीतर घुस न जावें, तबतक हमें उसका दर्शन दुर्लभ है। सब से ऊपर का परदा 'अन्नमय कोष' कहाता है। चर्म, मांस, रुधिर, हड्डी आदिसे बना हुआ जो शरीर है, वेदान्त परिभाषामें उसे "अन्नमय कोष" कहते हैं। यह अन्नमय इस लिये कहाता है कि, अन्नसे ही इसका पालन-पोषण होता है।

इस अन्नमय कोष के अन्दर और उससे सूक्ष्म "प्राणमय" कोष है। प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान,—ये पाँच पवन शरीरमें स्थित हैं। प्राणवायुका स्थान हृदय है। वह श्वासके चलानेका कार्य करता है। अपानवायुके द्वारा मल-मूत्रका त्यागन होता है। गुदा इसका स्थान है। समानवायु नाभिमें रहता है—और भोजनादिसे जो रस बनता है, उस को शरीर-भरमें पहुँचाता है। उदानवायुका स्थान कण्ठ है। जो अन्न और जल खाया-पिया जाता है, उसे वह अलग-अलग करके खींचता है। व्यानवायु सारे शरीर में रहता है। भूख, प्यास और नींद आदि की इच्छा इसीके द्वारा होती है।

इस प्राणमय कोषके अन्दर और इससे भी सूक्ष्म "मनोमय कोष" है, जिसके द्वारा सङ्कल्प-विकल्प और अहङ्कार उत्पन्न होते हैं। इस मनोमय कोषके अन्दर और इससे सूक्ष्म विज्ञान-

मय कोष है। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ जो कि ज्ञानको ग्रहण करती हैं, और छठवीं बुद्धि,—ये सब मिल कर विज्ञानमय कोष बनाती हैं। इस विज्ञानमय कोषके अन्दर आनन्दमय कोष है, जहाँ तुरीयावस्था में आत्मा को लय प्राप्त होता है।

जिस समय साधक अभ्यास करते-करते चित्तको स्थिर और बुद्धिको सूक्ष्म कर लेगा, उस समय इन पर्दों के भेद उस पर आप-से-आप खुल जायँगे—और वह सबसे अन्तिम परदे के अन्दर घुसकर, अपने आत्मा का साक्षात्कार करेगा। जिस समय इस अवधि तक साधक चला आयेगा—सिद्धियाँ सब उसके सामने हाथ बाँधे खड़ी रहेंगी। अब योगी केवल विचार या सङ्कल्पसे ही अदृश्य हो जायगा। बहुत लोग इसको सुनकर आश्चर्य करेंगे और कहेंगे कि, एक असम्भव बात किस तरहसे सम्भव हो सकती है; परन्तु यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो मालूम होगा कि, कोई वस्तु उस समय तक देखी नहीं जा सकती, जब तक कि उस वस्तुमें दिखाई देने की शक्ति और देखनेवाले में देखनेकी शक्ति न होवे; दोनों का होना ज़रूरी है। यदि वस्तु में दिखाई देने की शक्ति है—परन्तु देखने वालेमें देखनेकी शक्ति नहीं—तो वह वस्तु नहीं दीख सकती। यदि वस्तुमें दिखाई देनेकी शक्ति नहीं, तो कोई उसे नहीं देख सकता। इसी सिद्धान्त पर जब योगी अपने शरीर की "ग्राह्यशक्ति का संयम करता है, तब उसे कोई देख नहीं सकता।

यदि योगी चाहे, तो वह सैकड़ों हाथियों के समान बलवान

हो सकता है। बल कोई स्थूल पदार्थ नहीं है; क्योंकि यदि बल कोई स्थूल पदार्थ होता, तो सब मोटे आदमी पतले आदमियों से अधिक बलवान होते, परन्तु ऐसा नहीं होता। शक्ति तेज पर निर्भर है। योगी अपने शरीरकी बिजलीको प्रवाहित करके उसे हाथियोंकी शक्तिसे मिलाता और इस तरह बड़ी भारी शक्ति प्राप्त करता है। जब एक चिराग़से दूसरा जलने लगता है, तब योगीके लिये यह कौन बड़ी बात है?

उदानवायुके संचयसे वह अपने शरीरको पानी के ऊपर भी तैरा सकता है। ऐसे योगीको पानी नहीं डुबा सकता; न वह दलदलमें फँस सकता है, क्योंकि उसमें ऊपर उठनेकी शक्ति है। क्षण-क्षण में अपने शरीरको बदल लेना, भूख-प्यासका न लगना, दूर-दूर के स्थानों का समाचार पाना—अपने शरीरको अग्निके समान तेजवान बना लेना इत्यादि बहुतसी सिद्धियाँ योगीके वशमें हो जाती हैं। ऊपर उठना अध्यात्म-विद्याका लक्ष्य है; यही हिन्दुओंका विकाश-सिद्धान्त (Evolution) है।

ऐ भव्य जीवो! चित्तको स्थिर करके, हृदयकी गुफामें ज्ञानका दीपक जलाओ; ताकि उसके प्रकाशसे सब कुछ दिखाई दे।

प्रथम खण्ड

मानसिक योग के चार मुख्य साधन।

मानसिक समाधि।

SELF HYPNOTISM

हठ-योगी जिस प्रकार षट् चक्रों से प्राणोंको ऊपर चढ़ाकर समाधि लगाते हैं; उसी प्रकार मानसिक योगी भी अपने पास कई एक सरल साधन रखते हैं। मानसिक योगका प्रत्येक साधन सरल और बेडर होता है। समाधिके लाभ महात्मा पुरुष जानते हैं। सदेवका भ्रम मिटकर आनन्द-ही-आनन्द रह जाता है। समाधिके चमत्कारों में से एक, उदाहरणार्थ, यहाँ लिखते हैं:—

किसी मह्दू भाँडने एक महात्माको बड़ी सेवा की। जाते समय महात्माने उसे समाधिका साधन बता दिया। बस, अब क्या था? भाँड रात-दिन इसी विचार में मस्त रहता कि, अक-

बर बादशाहको इसका चमत्कार दिखलाकर, ज़िन्दगी-भर के लिये, एकही जगहसे रोटी पाया करूँगा। अकबर बादशाहका हिन्दुओं पर बहुत विश्वास था। ज्योंही यह भाँड उनके पास पहुँचा और अपना करतब कह सुनाया, वह राज़ी हो गये और एक दरबारमें उसे अपना चमत्कार दिखलानेको कहा। दरबार किया गया और वह भाँड आसन लगाकर समाधिस्थ हो गया। कुछ दिनों तक वह एक अलग घरमें रक्खा गया। फिर दरबार करके, उसके कथनानुसार, उसके बदन पर नश्तर लगाया, चिनगारी रक्खी, परन्तु वह बेसुध नहीं जागा। उस समय सचमुच वह ब्रह्मानन्दमें मग्न था। समाधि लेते समय उसने उठने के समय का ध्यान नहीं किया था, इसीसे हज़ारों उपाय करने पर भी अकबर बादशाह उसे उठा न सके।

अकबरने जब देखा कि, यह किसी प्रकार भी नहीं जागता है, तो यह सोच कर कि शायद अपने-आप जागे, एक वर्ष तक उसे एक मैदान में रखकर उस पर कड़ा पहरा रखवा दिया; परन्तु निष्फल हुआ। अन्त में यह जान कर कि यह मर गया है, उसे एक गुफामें फिंकवा दिया।

एक सिक्ख सरदार शिकार खेलता-खेलता उसी वनमें जा निकला, जहाँ पर कि वह भाँड गुफामें पड़ा था। बेधड़क वह उस गुफा में शिकार मिलने की आशा से घुस गया। शिकार न मिला, परन्तु एक आदमीको वहाँसे खींच कर वह बाहर लाया। देखने से यह मालूम होता था कि, कोई युवक

पुरुष अभी सोया है ; पर धूल और गरद्दे से उस का सब शरीर बहुत ही मैला हो गया है; साँस बन्द है, यह देख कर उसने सोचा कि, यह मुर्दा है और बड़े ज़ोर से उठाकर दूर फैंक दिया।

दूर फेंकना ही था कि, चोट के धक्के से उसकी समाधि खुलगई। बड़े ज़ोर से पुकार कर वह कहने लगा कि, अकबर बादशाह तेरा प्रताप युग-युग बढ़े!

प्यारे मानसिक योगके सीखने वालो!

आप बड़ा आश्चर्य करेंगे कि यह क्या बात है। कहाँ अकबर का राज्य कहाँ? आज सिक्खों का ज़माना, २५० वर्ष का फर्क। उसकी और उसके गुरु की समाधि में कोई भी अन्तर नहीं था, परन्तु बुरी वृत्ति होनेसे उसका सारा योग निष्फल गया।

आज आप लोगों को एक अद्भुत और सरल साधन मानसिक समाधि का देते हैं। आज ही से कार्य का आरम्भ कीजिये।

समाधि का साधन।

आँख की पुतली को शास्त्रज्ञ "निरञ्जन" कहते हैं। जिस प्रकार रेलगाड़ी का इञ्जन सारी गाड़ी को चलाता है, उसी प्रकार हमारे आध्यात्मिक शरीर के इञ्जन यही नेत्र हैं।

बाज़ार से एक शुद्ध साफ़ बड़ासा दर्पण मोल ले आवें या कुछ दिनों के लिये किसीसे माँग लें और उसको अपने सामने

किसी चौकी पर स्थापित करें। पीठ उत्तर की ओर रहे और मुँह दक्षिण की ओर। दर्पण के बीच में बाईं आँख की पुतली को टकटकी अर्थात् अपने दृष्ट का केन्द्र नियत करें और दत्तचित्त होकर दृष्टि करें और ध्यान करें कि, हमारी आकर्षणशक्ति (मिक़्नातीस) निकलकर, पुतली में जाकर, दिल और दिमाग दर्पण के प्रतिबिम्बमें जारही है और वह दर्पण वाला मनुष्य (उसे अपनी छाया नहीं समझना चाहिये) अभी बेसुध होता है। कई व्यक्ति १५ दिन में, कई १६ और कई २६ दिन में उद्घाटित ज्ञानचक्षु या समाधिस्थ या किसी और अन्य दशा को प्राप्त कर लेते हैं। आप पर भी यह दशा कुछ न्यून या अधिक अवश्य होगी। यदि आप टकटकी लगा कर, बिना पलक गिराये. एक घण्टे देखनेके साधनको कर चुके हैं, तो बहुत जल्दी इसमें उत्तीर्ण होंगे।

समाधिके समयमें नाड़ी और श्वासा इत्यादि सब बन्द हो जाते हैं। वह समय उमर में नहीं लिया जाता अर्थात् उमर श्वासों पर मुक़र्रर है। जिसकी श्वासा जल्दी ख़तम होगी, उसकी आत्मा को शरीर जल्दी छोड़ना होगा।

मान लो, किसी आदमीकी अवस्था, वे ज्योतिषी जो हज़ारों वर्ष पहिले चन्द्र और सूर्यग्रहण बतला दिया करते हैं, ९० वर्ष की बतलावें और यदि किसी योगी ने उसको ११ वें वर्षमें समाधिका साधन बता दिया है और वह २० वर्ष समाधिमें रहा, तो जागने पर उसके ग्यारहवें वर्ष का हीआरम्भ होगा।

आवाहन ।

(SPIRITUALISM.)

पहले तुम एक चौकी इस प्रकारकी तैयार करो जिसमें लोहेकी कील न हो और चौकी हल्की हो; फिर पूरे घरको या एक कमरे को काले या नीले रङ्गसे रँग दो या केवल नीले रँग के कागज़ दीवारों और छतपर लगा दो। बैठनेका आसन भी नीला कर दो। जितने मेम्बर—सभासद्—बनना चाहते हो, आपसमें यह ठान लो कि हम मन्दिर के भीतर कदापि न बोलेंगे और न कोई इशारा—संकेत—करेंगे। एक योग्य पुरुष को, जिस पर सबका विश्वास हो, सभापति बनाओ। जिन बातों को वह बाहर समझाकर अन्दर आवे, ज़रा से इशारे से उन्हें समझ लो, फिर देखोगी कि थोड़े ही दिनोंमें इस योगमन्दिर में कैसे चमत्कार दीखते हैं।

आवाहनको सरकिल या चक्र बैठाना भी कहते हैं। सरकिलमें तीन मनुष्यों से कमको कभी नहीं बैठना चाहिये और ग्यारहसे अधिकके बैठनेसे मीडियम * पर असर बहुत हो जावेगा; जिससे बहुत डर है, कि मीडियम किसी योग्य

* मामूल जिस पर अमल किया जाता है।

पुरुष के बिना न उठें और कोई दुष्टात्मा आकर उसको किसी प्रकारकी पीड़ा न दे। अब प्रयोक्ताके लिये हमने चार साधन मुक़र्रर किये हैं। उनको पहिले परिपक्व कर लेना चाहिये, जिससे किसी कार्य में विघ्न न पड़े और प्रयोक्ता बहुत जल्द अपने उद्देश्यमें सफल हो जाय।

चक्रमें बैठनेवालों के लिये चार साधन अति आवश्यक हैं :—

(१) नेत्रोंको आकर्षण-शक्ति बढ़ाना और एक घण्टे तक, बिना पलक झपकाये, टकटकी लगाकर देखते रहना।

(२) प्राण करना।

(३) इच्छा या सङ्कल्प-शक्ति (Will-power) को बढ़ाना।

(४) शक्ति का असर किसी वस्तुमें डालकर उससे काम लेना।

(१) आकर्षण-शक्ति को बढ़ाना।

एक शालिग्रामकी मूर्त्ति को, अपने सामने, दो फ़ुट की दूरी पर, ज़रा ऊँचे स्थानपर, स्थापित करो और उसमें किसी विन्दुको अपना लक्ष्य मानकर उसको ओर टकटकी लगाकर देखना आरम्भ करो। जहाँ तक हो सके, आँख न झपकाओ। जब देखो कि आँखोंमें पानी बहुत आगया है, आँख झपका कर पानी गिरा दो और फिर देखने लगो। जब एक घण्टे

तक विना पानी आये और विना पलक झपकाये देख सको, तब जान लो कि तुम्हारा पहला साधन पूरा हुआ। इस प्रकार एक काले विन्दु पर भी देखा जाता है। वह विन्दु एक चौअन्नी के बराबर गोलाकार होता है।

(२) पास करना।

ऊँची चौकीपर शालिग्रामकी मूर्त्तिको या एक तख्तीको अपने समीप रक्खो और अपने दोनों हाथों के पोरों को विना छुए इधर-उधर फिराओ और दृढ़ विचार करो, कि तुम्हारे हाथोंसे आकर्षण-शक्ति, श्वेत धूएँ के समान सूक्ष्म रूपसे निकल कर, उसमें भरी जा रही है। फिर उलटा विचार करो कि, शालिग्रामके शुद्ध विचार की शक्ति और तुम्हारे भरे हुए विचार की शक्ति, तुम्हारी उँगलियोंके द्वारा, तुम्हारे शरीर में आ रही है। जब एक घण्टे तक विना थके यह कामकर सको, तब जान लो कि तुम्हारा दूसरा साधन समाप्त हुआ।

(३) इच्छा-शक्ति को बढ़ाना।

(Will-Power इच्छा या सङ्कल्प-शक्ति)

सरदार हरिसिंहजीके समयमें एक दिन आधी रात को चढ़ाई करनेकी आज्ञा मिली, क्योंकि सिक्खोंके जीते हुए अपने इलाकेमें बलवा फैला हुआ था। जो घुड़सवार रवाना हुए, उस समय उस दलके अफसर साधू नन्हंगसिंह जी थे। कम्पनी के सूबेदारोंमें से एक सरदार को कोई सिद्ध पुरुष

मिल गया था, जिसने उनको मानसिक पूजाका मार्ग बतला दिया था; अर्थात् वह प्रातःकाल उठकर आराम से आसन पर बैठ जाता और अपने इष्ट गुरुके ध्यानमें ऐसा मग्न हो जाता, कि उसके पास मानसिक मूर्त्ति स्थूल रूपमें बनकर चली आती थी। वह सोने-चाँदीकी थालियों और कटोरोंमें नाना प्रकारके व्यञ्जन—मिठाई फल-फूल चन्दन धूप दीप इत्यादि—रख लेता और अपने इष्टदेव के तिलक लगाता, भोग लगाता और उनके प्रेम में मस्त रहता। इसी प्रकार तीन वर्ष से करता चला आता था। प्रातःकाल हुआ, इधर उसकी पूजा का समय आ गया, परन्तु साथी कहाँ ठहरते थे। लाचार साधुजी घोड़ेपर ही अपने इष्टदेवका ध्यान करने लगे।

रङ्ग-विरङ्गकी वस्तुओंको लेकर और थाल इत्यादि को मँगाकर पूजन आरम्भ कर दिया। उस समय जबकि साधुजी ध्यानमें मग्न थे, घोड़ा भी धीरे-धीरे चलने लगा। दो कोस पर जाकर साधु नन्हंगने पूछा कि सरदार कहाँ हैं? सबने उत्तर दिया, कि सरदार प्रतिदिन प्रातःकाल के समय मानसिक योगका साधन किया करते हैं, कहीं पीछे अटक गये होंगे। नन्हंग साधुसिंह अत्यन्त क्रोधित हुए और कहने लगे "हाय! यह भजनका कौनसा समय है! सारा देश पठानों से लुट गया। प्रजा कष्ट भोग रही है। हमारे कई सिंह-भाई मारे गये, परन्तु सरदार अपने साधनमें मग्न हैं।" इतना कहकर घोड़ेको पीछे दौड़ाया। दो कोस जब पीछे चले आये,

तब क्या देखते हैं कि, सरदार घोड़े पर बैठे हैं और घोड़ा धीरे-धीरे आ रहा है। इस दशामें सरदारको देखकर, साधु नन्हंग सिंह क्रोध में आ भला-बुरा कहने लगे; परन्तु सरदार अपने प्रेम में मग्न था। उसको चढ़ाई से क्या काम? साधु सिंहने पास जाकर उस सरदार पर एक बड़े ज़ोर का हण्टर फटकारा। हण्टर लगते ही छन-छन-छन-छन छन-छन छन-छन-छन की आवाज़ आई और आँख खुल गई। सब वस्तुयें मूर्त्तिको छोड़कर प्रत्यक्ष दिखाई देने लगीं। थाली और सोने चाँदीके कटोरोंका ढेर लग गया। नाना प्रकारकी मिठाई फूल इत्यादि सामने मनों पड़े दिखलाई देने लगे। नन्हंग साधुसिंह उस सरदार के चरणों पर गिर पड़ा और कहने लगा,—"महात्मा कृपा करो।" बस, सरदारने इस साधनके अन्तिम चमत्कार को देखकर घोड़ा साधुसिंहके हवाले किया और आप साधु होकर देश में भ्रमण करने लगा।

योगाश्रम में दो सज्जन मानसिक पूजा करते थे। एक चमत्कार भी दिखला सकता था। इस ब्राह्मण-देवता का अनोखा चमत्कार यह था कि, साधन करते समय कुछ पेड़े और अनार के दाने अपने पास रख लेता और यह विचार करता कि, अब भी बहुतसी वस्तुयें मँगवाई हैं। परन्तु दो चीज़ें पहले की पड़ी हैं। जब मानसिक पूजा द्वारा-अपने इष्ट देवका भोग लगाता, तो सचमुच ही अनार के दाने और पेड़े कम हो जाते।

परन्तु तुम इस साधनको इस समय ऐसा करो कि बाघ—शेर—या सर्प की असली मूर्त्ति का ध्यान करो। जिस दिन मूर्त्ति ठीक जम जायगी, तुम मारे डर के आँख खोल दोगी।
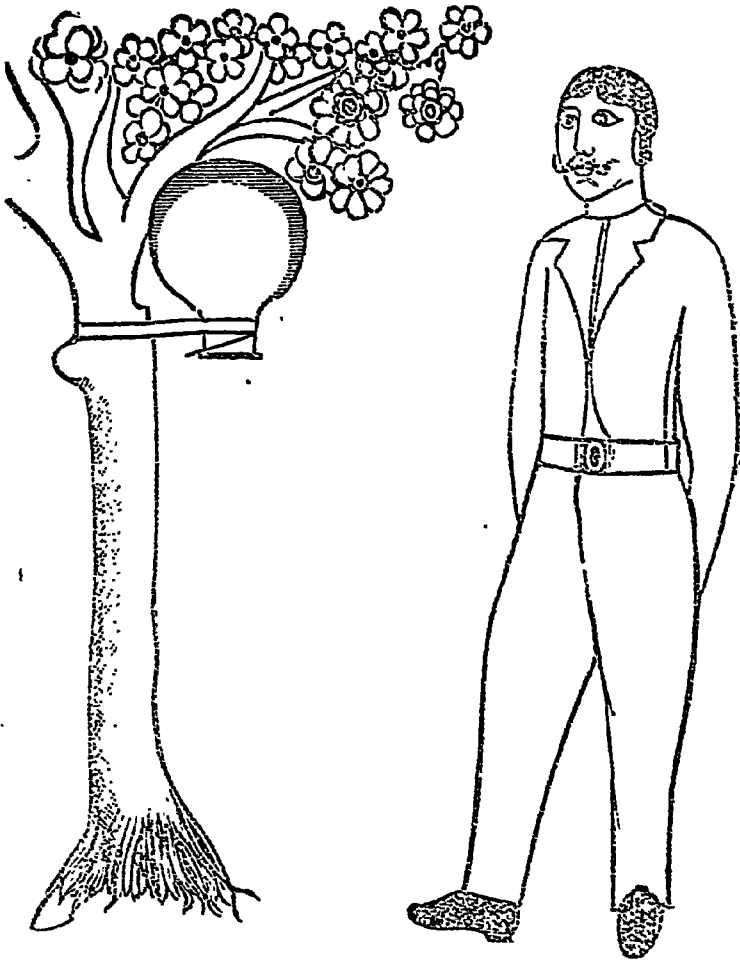
चौथा साधन।
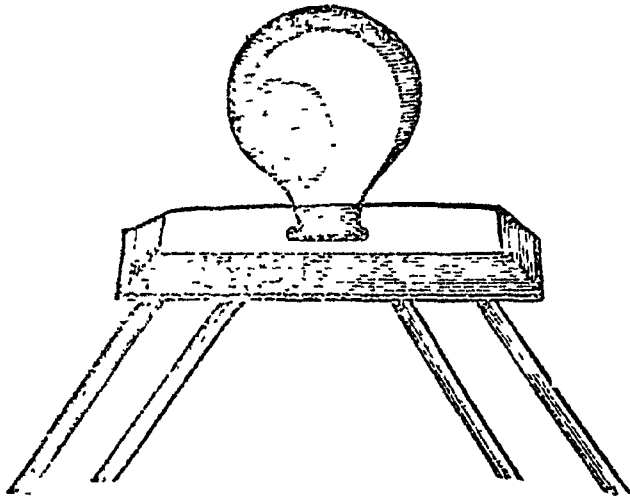
कुम्हारके यहाँ से मिट्टी का कच्चा घड़ा ले आओ और किसी बाग़ीचे या निर्जन स्थान में किसी वृक्षके साथ इस प्रकार बाँधो कि, घड़े का मुँह नीचे को रहे और पृथ्वी से दो गज़ ऊँचा रहे। तुम उस घड़े से पाँच गज़की दूरी पर खड़े हो जाओ और उसमें एक लक्ष्य बनाकर, उसकी तरफ टक-टकी लगाकर, देखना आरम्भ करो। हाथ लम्बे करके उसकी तरफ बहुत देर तक खड़े रहो और मनमें यह दृढ़ विचार करो कि, तुम्हारी आकर्षण-शक्ति (कुव्वते मक़नातीस) घड़े में भरी जा रही है और घड़ा तुम्हारे पास आरहा है। यदि अच्छी मिहनत करोगे,तो निस्सन्देह एक सप्ताहमें घड़ा तुम्हारी आँखोंके सामने आ जायगा। उस समय बड़े ज़ोर से घड़े के एक मुक्का मारो। कुछ दिनोंमें घड़ा चकनाचूर हो जायगा।

इस समय यह अद्भुत और सरल साधन करो। एक चौकी पर बाज़ार से एक पक्का मिट्टी का घड़ा लाकर रक्खो। एक बन्द और सुनसान मकान में घड़े पर इस प्रकार हाथ रक्खो कि, दायें हाथका अँगूठा बायें हाथके अँगूठे पर रहे और घड़े पर ज़ोर न पड़े, तब यह विचार करने लगो कि, तुम्हारे हाथोंसे "शक्ति" निकल कर घड़े में भर रही है और उसको दायें से बायें को ओर फिरा रही है। नेत्रों को मूँद लो; यदि घरमें कोई हल्ला इत्यादि हो तो कानोंमें रूई दे लो। तुम्हारे दृढ़चित्त होते ही घड़ा पहले-पहल बहुत धीरे, फिर बहुत ज़ोर से फिरेगा। फिर यह विचार करो कि, मेरी शक्ति इसको दाँईं से बाईं ओर फेरे। घड़े का उसी समय उस ओर फिरना आरम्भ होगा। यदि इस साधनको बढ़ाओगे तो घड़ा पहले केवल हाथोंसे, फिर सोटोसे, फिर तागा बाँधे रहनेसे, दूर बैठनेपर फिरता रहेगा—चाहे तुम कितनी भी दूर बैठे रहो। यदि एक वर्षतक अच्छी मिहनतसे इस साधन को करोगे, तो तुम बिना तागेके घड़ेको दूर रखकर फिरा सकोगे; चाहे उसपर एक आदमी भी क्यों न बैठा हो। फिर खुले मैदान हज़ारोंके सामने चमत्कार बता सकोगे। कभी-कभी ऐसा होता है कि, शक्ति घड़ेमें बहुत भर जाती है और इसके कारण घड़ा फूट जाता है। मूर्ख मारे डरके भाग जाते हैं। जब इन सब साधनोंको अच्छे प्रकारसे परिपक्व कर लोगे, तो आवाहनमें पहले ही दिन आत्मा (मुक्त आत्मा) आने लगी-

गी, परलोकका हाल मालूम होगा। चौकीको बीचमें रक्खो और तुम लोग उसके आस-पास बैठ जाओ। तुममेंसे जो मेम्बर योग्य होवे, वह मीडियमको बेहोश करे और आज्ञा दे कि, इस चौकी के हाथ लगाकर इसमें शक्ति भर दे। एक दो दिन में चौकी तैयार हो जायगी। इस चौकी पर पहले ही दिन मुक्त आत्मायें आने लगेंगी। इस तरह तुम हाथोंको रक्खो, कि हर एक का हाथ दूसरेके हाथसे छूता रहे और प्रत्येक मनुष्य के दायें हाथका अँगूठा दूसरे के बायें हाथके अँगूठे पर रहे।
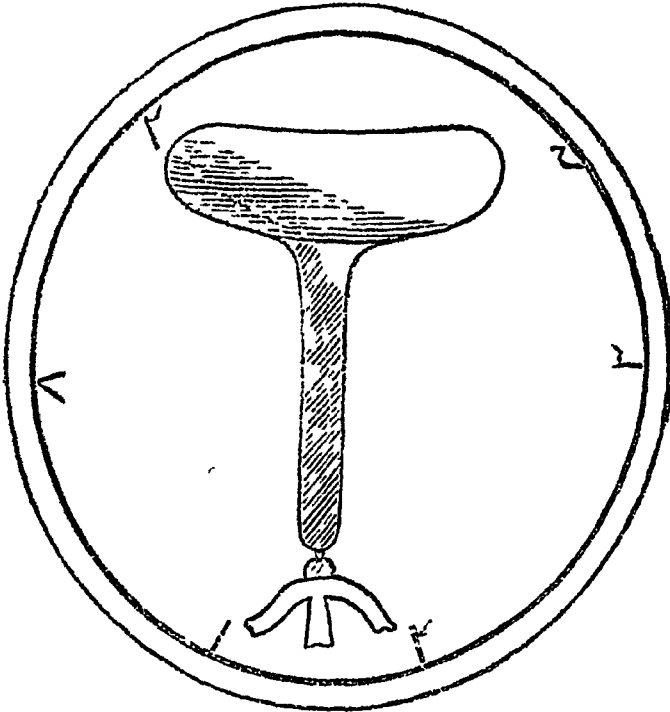
घरके भीतर सिवा एक मनोहर पदके बोलना मना है। एक अच्छा भजन गाओ। जब वह समाप्त हो जाय, तब अपने-अपने आसनों पर ठीक बैठ जाओ, क्योंकि फिर हिलना और नाक के द्वारा ज़ोर से साँस लेना मना है। कमरा पहले ही से सुगन्धित वस्तुओंसे मस्त रहता है, एकदम शान्ति आ जाती है। इस वक्त सब-के-सब यह विचार करो कि, हे ईश्वर किसी अच्छी आत्मा को भेज, और इच्छा-शक्तिको जमाओ कि तिपाई में आत्मा आ रही है और चौकी को हिला रही है। जब तिपाई हिलने लगे तब जान लो कि, आत्मा आ गई है। तुम उससे इस प्रकार के प्रश्न करो कि यदि आत्मा आगई है, तो तिपाई के अमुक पाये को इतने बार हिलावे। यदि हिन्दू की है तो तीन बार, मुसल्मान की है तो चार बार इत्यादि। इसी प्रकार यह कहो कि, यदि आत्मा आ गई है, तो किसी में प्रवेश कर जाँवे। कभी-कभी आते ही वह तुम्हारे मीडियम को बेसुध कर देगी। उससे जो-जो प्रश्न पूछोगे, उत्तर ठीक पाओगे। कभी-कभी लिखित उत्तर भी मिलते हैं। यदि करोगे, तो ईश्वर की अद्‌भुत महिमा का परिचय मिलेगा। एकदम से आँखें खुल जायँगी। संसार में ऐसी कोई भी वस्तु नहीं, जो इसके सामने असम्भव हो। हमारे दूर-पासके मित्रो व पाठको! तुम्हें सौगन्ध है कि, इसे वा ऐसे किसी साधनको न करो।

नोट—यदि तिपाई तुम्हारे पास तय्यार नहीं है, तो योगाश्रम से ३) में मंगा सकते हो

मृत्यु की ख़बर।

पहले समय की बात नहीं हैं, आज भी बहुत से महात्मा पुरुष अपनी मौत की सूचना पहले ही से दे देते हैं। जिनका मन शुद्ध है, ऐसे हज़ारों मनुष्य मृत्यु के कुछ घण्टे पहले ही कह देते हैं, कि आज हमको अमुक समय शरीर छोड़ना है और ठीक उसी समय छोड़ देते हैं। परन्तु २ साल ६ महीने या ८ वर्ष पहले बतला देना, कि इस समय, इस तिथि को मैं मर जाऊँगा,—एक चमत्कारक बात है, अभ्यास और महात्मापने का काम है। यह कार्य छाया-पुरुषके साधन से सिद्ध हो जाता है।

स्वरोदय शास्त्र ।

स्वरोदय ।

स्वर+उदय=स्वरोदय। स्वरके नियम-पूर्वक चलाने की विद्याको स्वरोदय कहते हैं। यह अत्यन्त प्राचीन और प्रतिष्ठित विज्ञान है। संसार की विद्याओं का यह केन्द्र है। जिन प्रश्नों का बड़े-बड़े तत्त्वज्ञ और भिन्न-भिन्न धर्म यथोचित उत्तर नहीं दे सकते, उनका यह शीघ्र ही समाधान कर सकता है। हिन्दू-शास्त्रके अनुसार संसार पाँच तत्वों से बना है; अर्थात् मूल तत्व, पाँच तत्वोंमें बँटनेके पश्चात्, सृष्टि की उत्पत्तिका कारण हुआ है। इनसेही पाँच तत्त्वों का भली भाँति ज्ञान होने से मनुष्य सृष्टिके रहस्यको समझ सकता है। श्रीमहादेवजीने इस विद्या

का वर्णन पार्वती से किया। जिस प्रकार हिन्दूशास्त्रके अन्तर्गत अनेक मतमतान्तरों एवं भिन्न-भिन्न विद्याओंके कर्त्ता महादेवजी माने गये हैं; उसी प्रकार स्वरोदय-शास्त्रका प्रथम ज्ञान भी शिव-पार्वती सम्वादके नामसे "शिव-स्वरोदय" में वर्णित है। ३०० वर्ष पूर्व इसके प्रख्यात ज्ञाता श्रीचरणदासजीने हिन्दी-भाषामें इसको कविताका रूप प्रदान किया। कहते हैं, कि श्री व्यास-पुत्र शुकदेवजीने स्वयं चरणदासजीको इसका ज्ञान कराया था।

इस समय यह विद्या गुप्त हो रही है। लोगोंका विश्वास इससे हट रहा है। परन्तु तब भी जो लोग इससे ज़रा भी परिचित हैं, वे इसके रहस्यको खूब जानते हैं। उनकी श्रद्धाको किसी प्रकारका तर्क खण्डित नहीं कर सकता। चरणदासजी का कथन है :—

सब योगन को योग है, सब ज्ञानन को ज्ञान।
सर्व सिद्धि को सिद्धि है, तत्व सुरन को ध्यान॥

इस विद्या को जानने वाले तीनों कालोंका हाल बता सकते हैं। जो इस विद्या से खूब परिचित हैं, वे अपनी मृत्यु अथवा बीमारी का हाल पहले ही मालूम कर लेते हैं। इसके अनुसार जो कार्य किया जाता है, वह कभी विफल नहीं होता।

धरनि टरे गिरिवर टरे, टरे जगत् सुन मीत।
वचन स्वरोदय ना टरे, कह मुरलीसुत रणजीत॥

पहिला परिच्छेद

स्वरोंका वर्णन।

स्वर तीन हैं। दहिना (पिङ्गलस्वर), बांयां (इड़ा स्वर) और सुष्मुणा। इड़ा, पिङ्गला, सुषमुणा—तीन नाड़ियों और इन्हींके नामसे तीन प्रकारके स्वर प्रसिद्ध हैं। इड़ा शरीरके बाईं ओर फैली हुई है; इसे चन्द्र-नाड़ी भी कहते हैं। पिङ्गला शरीर के दाईं ओर है; इसे सूर्यनाड़ी कहते हैं। सुषुम्णा नाड़ी शरीरके बीचों-बीच है। सूर्य्य-चक्र इसी के आधार पर स्थित है।

श्वास कभी दाहिने नथने से ज़ियादा ज़ोरसे निकलता है, कभी बायें से और कभी दोनों नासिकाओं से बराबर निकलता है। यदि स्वर बायीं नासिकासे ज़ियादा आवे, तो उसे इड़ा स्वर या चन्द्र-स्वर कहते हैं। यदि श्वास दाहिनी नासिकासे अधिक आवे, तो उसे पिङ्गला स्वर या सूर्यस्वर कहते हैं। यदि श्वास दोनों नासिकाओंसे बराबर निकलता है, तो उसे सुषुम्णा स्वर कहते हैं।

इड़ा पिंगला सुषुम्णा—नाड़ी तीन विचार।
दहिने बायें स्वर चलें-लखें धारना धार॥

इस विद्यामें चन्द्रमा को अधिष्ठात्री माना गया है। सब प्रकारकी गणना यहीं से की जाती हैं। शुक्लपक्षसे सब कार्य्यारम्भ होता है।

शुक्ल पक्ष के आदि ही, तीन तिथि लग चन्द।
फिर सूरज फिर चन्द है, फिर सूरज फिर चन्द॥
कृष्ण पक्ष के आदि में, तीन तिथि लग भान।
फिर चन्दा फिर भान है, फिर चन्द फिर भान॥

शुक्लपक्ष अर्थात् चांदनी रातकी पहली तिथिको नीरोगी मनुष्य का सूर्योदयके समय, चन्द्र-स्वर चलता रहेगा। इसी प्रकार लगातार तीन दिन तक ऐसा होगा। यह दशा पाँच घड़ी तक रहती है बादमें स्वर बदल जाता है।

कृष्णपक्षमें लगातार तीन दिन तक अर्थात् प्रथमा, द्वितीया और तृतीया को सूर्योदयके समय सूर्यस्वर चलेगा।

तीन दिन के बाद सवेरे स्वर बदल जाया करता है। नीचेके नक्शे से यह बात भली भाँति समझमें आजावेगी।

प्रातःकाल का समय सूर्योदय से लेकर ५ घड़ी तक।

	दाहिना (सूर्य)	बाँया (चन्द्र)
कृष्णपक्ष	१, २, ३, ७, ८, ९, १३, १४, १५,	४, ५, ६, १०, ११, १२,
शुक्लपक्ष	४, ५, ६, १०, ११, १२,	१, २, ३, ७, ८, ९, १३, १४, १५,

पाँच घड़ी समाप्त होने पर स्वर आपसे आप बदल जाता है। यह दशा केवल स्वस्थ मनुष्यों की होती है। यदि शरीरमें कुछ गड़बड़ है, तो निःसन्देह स्वरमें फ़र्क़ पड़ जावेगा। यदि पक्षके आरम्भमें, लगातार ३ दिन तक, स्वर उलटा चले तो प्रायः १५ रोज़ तक शरीरमें एक न एक नयी व्याधि सताया करती है। यदि कोई मनुष्य केवल स्वर ठीक कर सके, तो कम-से-कम बहुत कम बीमार रहेगा और यदि बीमारी रहेगी तो बहुत ज़ियादा ज़ोर न करेगी।

दूसरा परिच्छेद।

पंच तत्वों का वर्णन।

आकाश, वायु, अग्नि, पृथ्वी और जल,—ये पाँच तत्त्व हैं। हरेक नासिका—नथने—से एक स्वर पांच घड़ी तक चलता है; फिर दूसरी नासिका—नथने—से चलने लगता है। जब स्वर चलता है, तो उसमें तत्व भी एक-एक घड़ीके हिसाब से चलते हैं। सबसे पहली घड़ीमें वायु-तत्व चलता है—फिर क्रमानुसार अग्नि, पृथ्वी और जल-तत्व चला करते हैं। वायु-तत्त्व इस प्रकार नहीं चलता। वह हरेक तत्वके साथ थोड़ी-थोड़ी देर चलकर, अपनी एक घड़ी पाँच घड़ीमेंसे ले लेता है। इस तरह कुल २४ घण्टोंमें, अर्थात् ६० घड़ी में, पाँच तत्त्व बारह बार बदलते हैं। यह तो हुई दशा अलग-अलग तत्त्वों की। इन पाँचों तत्वोंके मेल से (Permutations & Combinations) हरेक के पांच भाग हो जाते हैं। उदाहरणके लिए वायुतत्व लीजिए:—

प्रथम, वायुमें वायु।

द्वितीय, वायुमें अग्नि॥

तीसरे, वायुमें पृथ्वी।

चौथे, वायुमें जल।

पाँचवें, वायुमें आकाश।

यह बात गणितसे भली भाँति मालूम हो सकती है। परन्तु स्वरोदयके अभ्यासी को गणित करनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि प्रत्येक तत्व का रङ्ग उसको हर वक्त दिखता रहता है। प्रत्येक तत्व के रङ्ग-स्वाद-रूप-चाल आदिका नक्शा नीचे दिया जाता है।

	नामतत्व	रङ्ग	स्वाद	स्वरूप	स्वभाव	चाल
१	आकाश	काला	कड़ुआ	कानके समान	शीतल	१ अङ्गुल-अन्दर ही अन्दर चलता है।
२	वायु	हरा	खट्टा	गोल	चञ्चल	८ ,, तिरछा ,,
३	अग्नि	लाल	चर्चरा	त्रिकोन	गरम	४ ,, ऊपर ,,
४	पृथ्वी	पीला	मीठा	चौकोन	भारी	१२ ,, सम्मुख ,,
५	जल	सफेद	मीठा से खारा कम	चंद्राकार	शीतल	१६ ,, नीचे ,,

स्वर पहचानने की साधारण रीति तो यह है कि, साधक

शान्त रीतिसे बैठकर श्वास लेवे। नासिकाके पास हाथ लगाकर देखे कि, श्वास कहाँ तक नीचे जाता है—उसे नाप ले। साधारणतः तत्त्व मालूम हो ही जावेगा। यदि नासिका-के अन्दर-ही-अन्दर श्वास रहे, तो आकाश-तत्त्व जाने। ४ अंगुल बाहर आवे तो अग्नि-तत्त्व—८ अङ्गुल हार आवे तो वायुतत्त्व; १२ अङ्गुल बाहर आवे तो पृथ्वी-तत्त्व;—१६ अङ्गुल बाहर आवे, तो जल-तत्त्व समझना चाहिए।

इसको एक दूसरी विधि भी है। एक आइना या दर्पणको साफ करके उसपर ज़ोर से श्वास मारो, ताकि दर्पण श्वासकी भाफ से धुँधला हो जाय; फिर देखो कि इस धुँधलेपनका क्या स्वरूप होता है।

यदि चार कोने बराबर हैं, तो पृथ्वी-तत्त्व जानो; अर्द्ध चन्द्राकार है तो जल-तत्त्व; यदि आकृति गोल हो तो वायु-तत्त्व चलता जानो। यदि आकृति त्रिकोण है, तो अग्नितत्त्व चलता जानो और यदि आकृति कान (कर्ण) की हो, तो आकाश-तत्व चलता जानो।
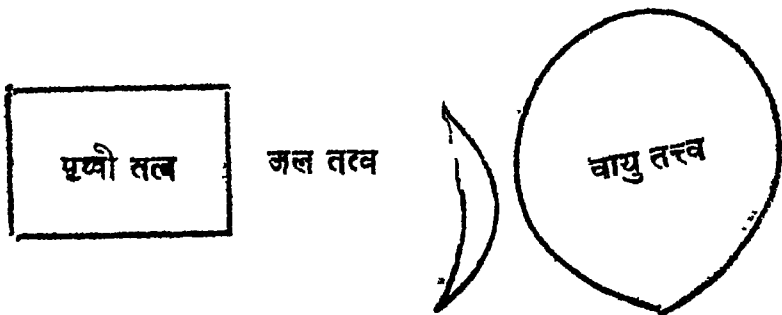
आकाश तत्त्व

तत्त्व पहचाननेकी एक सरल विधि और भी है। पाँच गोली पाँच तत्त्वोंके रँगकी बनवालें। सदा उनको अपने जेबमें रक्खें। जब कभी आपको इच्छा यह जाननेकी हो कि, कौनसा तत्त्व चल रहा है, तो आँखें बन्द करके और मन को एकाग्र करके जेबमेंसे एक गोली निकाल लें। बहुधा उसी रंगकी गोली निकलेगी, जिस रङ्ग का तत्त्व उस समय चल रहा होगा। यदि नेत्र बन्द कर लिये जावें, तो अँधेरेमें जो रंग दिखाई देता है—उसको ध्यान-पूर्वक देखने से भी तत्त्व की पहचान हो सकती है। परीक्षाके लिए अपने किसी मित्र से कहें कि, कोई रंग वह अपने मनमें ले ले। अब तुम यह पता लगाओ कि तुम्हारा कौनसा तत्त्व चल रहा है। जो तत्त्व चल रहा होगा, वही रंग उसने अपने मनमें लिया होगा। पहले-पहल ग़लती अवश्य होगी, परन्तु अभ्याससे ठीक रङ्गका पता लग जावेगा। अभ्याससे यह बतलाना, कि अमुक मनुष्यने आज क्या खाया है, मामूली बात हो जाती है।

तीसरा परिच्छेद ।

स्वरोंका वर्णन ।

स्वरों का सम्बन्ध राशि, नक्षत्र और दिन तीनोंसे है। प्रश्न पूछनेके समय यह बहुत काम आता है। इड़ा स्वरका स्वामी चन्द्रमा है—यह स्थिर है। पिङ्गला स्वर का स्वामी सूर्य है—यह चर है। सुषुम्णा—चर और स्थिर दोनों स्वभाव अपनेमें रखता है। इड़ा शीतल, पिङ्गला गर्म और सुषुम्णा सम-शीतल है। इड़ा का स्वामी कई हिन्दू-ग्रन्थकारोंने ब्रह्मा, पिंगलाका शिव और सुषुम्णाका विष्णु लिखा है। सोमवार, बुधवार, बृहस्पतिवार और शुक्रवार चन्द्रस्वर के दिन हैं। शनि, रवि और मङ्गल—ये सूर्य-स्वरके दिन हैं।

मंगल अरु इतवार दिन, और शनिश्चर लीन ।
शुभ कारज को मिलत हैं, सूरज के दिन तीन ॥
सोमवार शुकर भलो, दिन बृहस्पति को देख ।
चन्द्र योग में सफल हैं, चरणदास कह शेष ॥

इड़ा स्वर या चन्द्र स्वर की दिशाएं हैं—दक्षिण और पश्चिम। पिंगला स्वर या सूर्य स्वरकी दिशायें हैं पूर्व और उत्तर।

इड़ा स्वरकी लग्न हैं—वृष-सिंघ-वृश्चिक-कुम्भ। पिङ्गला स्वर की—मेष-कर्क-तुला-मकर और सुषुम्णास्वरकी—मिथुन, कन्या, धन और मीन हैं।

सूर्य्य स्वर	मेष	कर्क	तुला	मकर
चन्द्र ,,	वृष	सिंह	वृश्चिक	कुंभ
सुषुम्णा ,,	मिथुन	कन्या	धन	मीन

कर्क मषे तुला मकर, चारों चरती राश।
सूरज सों चारों मिलत, चरकारज प्रकाश॥
मीन मिथुन कन्या कही, चौथी औ धन मीन।
द्विस्वभाव का सुषुमणा, मुरली-सुत रणजीत॥
वृश्चिक सिंह वृष कुम्भ युत, बायें स्वर के संग।
चन्द्र योग को मिलत हैं, थिर कारज परसंग॥

नक्षत्र।

इड़ा स्वर के नक्षत्र ये हैं,—

अश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुणी, उत्तराफाल्गुणी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़।

पिंगला स्वरके नक्षत्र ये हैं,—

अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, उत्तराषाढ़, अभिजित, श्रवण, धनिष्ठा, सतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, रेवती और रोहिणी।

सुषुम्णा स्वर के नक्षत्र ये हैं:—

मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु और पुष्य।

तीन अचूक औषधियाँ

तीस सालकी परीक्षित, कभी भी फेल न होने वाली, हर गृहस्थ और वैद्य के घर में रहने लायक दवाइयाँ:—

(१) नारायण तेल...इस तेलकी मालिश करने से बदन का दर्द, गठिया, लकवा, फालिज, सूनापन आदि ८४ वायु रोग आराम होते हैं। वात प्रकृति वालों के लिये यह तेल शीतकाल में अमृत है। निरोग अवस्था में नित्य मालिश कराने से बदन सुन्दर सुडौल और पुष्ट होता है। प्रत्येक अमीर को इसे मालिश कराना चाहिये। दाम आधपाव का १॥)

(२) शिरशूलान्तक चूर्ण—एक मात्रा खाकर जरासा पानी पी लेने से ठीक पन्द्रह मिनट में दर्द-सिर आराम होता है। कामरूप देश का जादू है। एकबार आजमा देखिये। दाम ८ मात्रा का १)

(३) कृष्णा विजय तेल—कैसाही चमड़े का रोग क्यों न हो, इस से अवश्य आराम होगा: दाम १) शीशी।

नामस्वर	पिंगला	इड़ा	सुषुम्णा
प्रसिद्धनाम	सूर्य	चन्द्र	दोनों
स्वभाव	चर	स्थिर	द्विस्वभाव
प्रभाव	गर्म	शीतल	द्विस्वभाव
देवता	शिव	ब्रह्मा	विष्णु
पक्ष	कृष्ण	शुक्ल	
दिन	शनि, रवि, मंगल	बु० वृ० शु० सोम	
दिशा	पूर्व, उत्तर	दक्षिण, पश्चिम	
तत्त्व	अग्नि, वायु	जल, पृथ्वी, आकाश	
शरीर के अनुसार दिशा।	नीचे, पीछे, दाहिने	ऊपर, बाँयें, सामने	
लग्न	मेष, कर्क, तुला, मकर	वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ	मिथुन, कन्या, मीन, धन,
नक्षत्र	उत्तराषाढ़, अभिजित, श्रवण, धनिष्ठा, सतभिषा, पर्वभाद्रपद रेवती, रोहिणी	उ० फाल्गुणी हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़, अनुराधा	मृगशिरा आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य,
संख्या	१, ३, ५, ७, ९, ११, इत्यादि	२, ४, ६, ८, १०, १२, इत्यादि	

स्वरों में अच्छे काम करने का वर्णन।

चन्द्र—स्वर।

चन्द्र-स्वरमें वे काम करने चाहिएँ जो स्थायी हों और जिनमें कुछ परिश्रम और प्रबन्धकी आवश्यकता हो। जैसे,—मकान बनाना, बाग़ लगाना, कुँआ खुदवाना, तालाब बनवाना, दूर-देशोंकी यात्रा करना, नये आश्रममें प्रवेश करना, मकान बदलना, विवाह करना, आभूषण पहनना, सामान इकट्ठा करना, दान देना, औषध खाना, हाकिमसे मिलने जाना, व्यापार करना, मित्रोंसे मिलना, धार्म्मिक विवाद करना, सवारी—हाथी घोड़े मोल लेना, दूसरे की भलाईके काम, बैङ्कमें या किसी साहूकारके यहाँ रुपया जमा करना, गाना-नाचना-बाजा बजाना, एक स्थानसे दूसरे स्थान पर रहने जाना, पानी पीना, पेशाब करना, धन एकत्र करना, बीज बोना, विद्यारम्भ करना, घर की नींव रखना, गाँव ख़रीदना, दूकान खोलना, किसी की सिफ़ारिश करना, किसी देश पर अधिकार करना, दक्षिण या पश्चिम की यात्रा करना, प्रेम करना, प्रार्थना करना, राज पर बैठना और नौकरी पर पहले दिन जाना इत्यादि इत्यादि।

साथ ही तत्त्वका ख़याल भी रहे। यदि चन्द्र स्वरमें जल या पृथ्वी-तत्त्व चलता हो, तो काम उसी क्षण पूरा हो।

सूर्य्य-स्वर ।

सूर्य-स्वरमें इनसे भी कठिन कार्य्यारम्भ करने चाहिएँ। जैसे:—कठिन विषयोंका पढ़ना, जहाज़ आदि पर बैठना, शिकार खेलना, ऊँचे स्थान या सवारी पर चढ़ना, लिखना, लेनदेन करना, कुश्ती लड़ना, सोना, जूआ खेलना, समुद्र-यात्रा करना, नहाना, भोजन करना, शौचादि को जाना-टट्टी जाना, युद्ध करना, शस्त्र-विद्या सीखना, बीमारी का इलाज करना, स्वरोदयका साधन करना, शत्रुपर चढ़ाई करना या उसके घर पर जाना, किसी स्थान को गिरा देना, पूर्व और उत्तर की यात्रा करना, कर्ज़ा देना या लेना इत्यादि इत्यादि।

सुषुम्णा-स्वर ।

सुषुम्णा स्वरके चलते समय कोई संसारी कार्य्य नहीं करना चाहिए। यदि कोई कार्य किया जावे, तो वह कभी भी ठीक न होगा। इस समय हरिकीर्त्तन, योगाभ्यास, सोऽहम का जप इत्यादि करना चाहिए। इस समय का किया हुआ योगसाधन बहुत अधिक प्रभाव रखता है। इस का मुख्य कारण यह है कि, सुषुम्णा स्वरके चलते समय, शरीरकी सब नाड़ियाँ और सब चक्र कुछ विकसित हो जाते हैं। सूर्यचक्र की ग्रन्थि भी अभ्याससे दिखने लगती है।

इसी प्रकार यह भी ध्यान रहे कि, तत्व का प्रभाव स्वरसे अधिक पड़ता है। पृथ्वी-तत्वमें वे काम करने चाहिएँ जो कि

परिश्रम और दृढ़ता चाहते हैं। जल-तत्वमें जल्दीके काम करने चाहिए। अग्नि-तत्वमें अत्यन्त क्लिष्ट और मिहनतके काम करने चाहिए। वायु-तत्त्व और आकाश-तत्त्वके काम प्रायः निष्फल होते हैं। वायु-तत्वमें शत्रु को हानि पहुँचा सकते हैं और आकाश तत्वमें योग-साधन कर सकते हैं।

स्वरों का नियमित पालन।

स्वरोंके नियमित पालनसे शारीरिक और मानसिक दोनों उन्नति हो सकती हैं। प्रातःकाल उठकर यह देखें कि, आज कौन दिन है, पक्ष कौनसा है, तिथि कौनसी है,। कृष्णपक्ष में, तीन तिथियों तक, दाहिना स्वर प्रातःकाल पाँच घड़ी तक चलता है, बादमें बायाँ हो जाता है। यदि दिन, तिथि और पक्ष समान हों, तो दिन अच्छी तरहसे बीतेगा। कोई भी दुर्घटना नहीं होगी। तीन दिन तक लगातार नियमपूर्व्वक स्वर और तत्त्वोंके चलने से पक्ष बहुत अच्छा बीतता है।

इस शास्त्रके आचार्य्योंने अपने अनुभवसे बतलाया है कि, यदि सूर्य्यके स्थानमें चन्द्रमा की चाल हो तो, पहले दो घण्टों में चिन्ता और शोकयुक्त घटना होवे ; दूसरे दो घण्टोंमें धन की हानि ; तीसरेमें यात्रा ; चौथे में हानि, पाँचवें में पदच्युत होना ; छठवें में रञ्ज ; सातवें में बीमारी से कष्ट ; आठवें में

पीड़ा या मृत्यु। यदि प्रातःकाल चन्द्र-स्वर और सायंकाल सूर्य्य-स्वर चले तो निराशासे आशाका प्रादुर्भाव होवे। इसके विपरीत—निराशा व कष्ट हो। यदि किसी प्रकारका दुःख या सन्ताप हृदयको पीड़ा दे रहा हो, तो चन्द्र स्वर चलावे। इससे प्रशंसा हो जावेगी।

दिन को तो चन्द्रा चले, चले रात को सूर।
यह निश्चय कर जानिए, प्राणगमन है दूर॥

अर्थात्—दिनको चन्द्र-स्वर चलावे और रातको सूर्य्य-स्वर, जो ऐसा साधन करता है, उसकी असामयिक मृत्यु नहीं होती। केवल भोजन करते समय बराबर आध घण्टे तक सूर्य्य-स्वर चलावे और रात्रिको पानी पीते वक्त पन्द्रह मिनट तक चन्द्र स्वर रक्खे।

सूक्ष्म भोजन कीजिए, रहिए ना पड़ सोय।
जल थोड़ा सा पीजिए, बहुत बोल मत खोय॥

भोजनके उपरान्त पहले आठ श्वास सीधे अर्थात् चित्त लेट कर ले, पुनः १६ श्वास दाहिने करवट होकर ले, पुनः ३२ श्वास बायें करवट होकर ले। इस तरह करने से बहुतसी बीमारियाँ भाग जाती हैं।

यदि किसी मनुष्यने ज़हर खा लिया है, तो चाहिए कि चन्द्र-स्वर और जल-तत्त्व शीघ्रही चलादे। ज़हर का कुछ भी

<table>
<tr><th colspan="3">कालज्ञान</th><th>शुभ कार्य्यों का वर्णन जो स्वरों में किये जाते हैं।</th></tr>
<tr><td colspan="3">चार, आठ, बारह, या बीस दिन चले तो योगी की आयु बढ़े</td><td>ब्याह करना, दान देना, तीर्थ करना, वस्त्र या भूषण बनवाना या पहनना, घर जाना, पुस्तक लेना, योगाभ्यास करना, प्रीति करना, औषधि देना, पानी पीना, दीक्षा मन्त्र देना लेना, बाग या गुफा बनवाना, अन्न बोना, इत्यादि।</td></tr>
<tr><td>८ प्रहर</td><td>१६ पहर</td><td>२ दिन</td><td rowspan="4">युद्ध करना, भोजन करना, स्नान करना, मैथुन करना, ब्याह करना, हाथी या घोड़ा या हथियार लेना, विद्या पढ़ना, मन्त्र जपना, ध्यान करना, कर्ज देना, लेना इत्यादि।</td></tr>
<tr><td>३ वर्ष</td><td>२वर्ष</td><td>१ वर्ष</td></tr>
<tr><td>१६ दिन चले</td><td colspan="2">१ मास</td></tr>
<tr><td>१ मास</td><td colspan="2">२ दिन</td></tr>
</table>

अन्तःकरण की चार प्रवृत्तियाँ (नक़्शा ३)

नाम	मन	चित्त	बुद्धि	अहङ्कार
देवता	चन्द्रमा	विष्णु	ब्रह्मा	रुद्र
कार्य्य	संकल्प विकल्प	चित्तमान	निश्चय करना	ममता 'मैं तू' का सम्बन्ध

पांच ज्ञानेन्द्रिय (नक़्शा ४)

श्रवण	त्वचा	नेत्र	रसना	नासिका
दिक्पाल	पवन	सूर्य	वरुण	अश्विनी-कुमार
शब्द	स्पर्श	रूप	रस	गन्ध
आकाश	पवन	अग्नि	जल	पृथ्वी

पञ्च कर्म्मेन्द्रिय (नक्शा ५)

वाक्य	हस्त	पाद	लिङ्ग	गुदा
अग्नि	इन्द्र	उपेन्द्र	प्रजापति	यम
बोलना	लेना देना	चलना	रति भोग	मल त्याग
आकाश	पवन	अग्नि	जल	पृथ्वी

असर न हो सकेगा। यदि पृथ्वी और जल-तत्त्व अधिक चलें, तो द्रव्य मिले और स्वास्थ्य अच्छा रहे। यदि वायु-तत्त्व चले तो विपत्ति, ज़ेरबारी, अग्निसे मृत्यु और आकाशसे हानि होती है।

यदि चन्द्रमा-स्वर हो और पृथ्वी या जल-तत्त्व अधिक चले, तो स्वास्थ अच्छा रहे और द्रव्यकी प्राप्ति हो। यदि बहुत से लोग एकत्र बैठे हों और वायु तत्व एकाएकी चलने लगे, तो समझलो कि कोई मनुष्य जाना चाहता है। कह दो, जो जाना चाहता है, वह सहर्ष जा सकता है।

चौथा परिच्छेद ।

स्वरोदय शास्त्र और आरोग्यता ।

इस विद्याका अभ्यासी बहुत ही स्वस्थ रह सकता है। वह दूसरों को बीमारी भी दूर कर सकता है। तत्व और स्वर इनके विपरीत चलने से ही बीमारी होती है और बीमारी होनेसे ये विपरीत चलने लगते हैं। यदि तत्व और स्वर समय पर चलें, तो कोई बीमारी नहीं हो सकती। यदि ज़रा भी भेद मालूम हो, तो जान लो कि बीमारी का प्रवेश हो गया है। उसी समय स्वर को ठीक करने का प्रयत्न करो। इससे एकदम तो बीमारी नष्ट न हो जावेगी, परन्तु काम अवश्य होगी। साधारण बीमारी तो इसीसे दूर हो जावेगी। यदि स्वर और तत्व ठीक चल रहे हैं, तो उनको कभी भी नहीं बदलना चाहिए। स्वरोंमें चन्द्रस्वर और तत्वों में जल और पृथ्वी स्वास्थ्य के लिए बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुए हैं। आकाश-तत्व मृत्युकारी है। अग्नि और वायु का भी जहाँ प्रवाह अधिक होगा, वहाँ बीमारी अधिक होगी।

सूर्य्य-स्वर गर्म और चन्द्र-स्वर ठण्ढा है। इसलिये यदि

कोई बीमारी शनि के कारण है, तो उसके लिये सूर्य्यस्वर लाभदायक है। इसी प्रकार गर्मीके कारण जो-जो बीमारियाँ होती हैं, उनके लिए चन्द्रस्वर लाभदायक हैं। साथ-साथ तत्वों का भी ध्यान रक्खा जावे।

स्वर बदलने की विधि।

पहली विधि—जो स्वर चलाना चाहो, उसके विपरीत करवट बदल कर लेट जाओ। थोड़ी देरमें स्वर बदल जावेगा। उदाहरणार्थ, यदि सूर्य्यस्वर चल रहा है और चन्द्र चलाना हैं, तो दाहिना करवट लेट जाओ।

दूसरी विधि—पुरानी रूई की बत्ती बनाकर नासिकामें लगादो। जो स्वर चलाना हो, उसे ही खुला रक्खो।

तीसरी विधि—लेटकर तीसरी पसलीके पास तकिया दबा दो। बहुत शीघ्र स्वर बदल जाता है।

चौथी विधि—एकाएक दौड़ने से या परिश्रम या कसरत करने से भी स्वर बदल जाता है।

बीमार को भी इसी नियम का पाबन्द बनावे। बहुत शीघ्र औषधि का सुपरिणाम मालूम होगा और बीमारी भाग जावेगी।

पाँचवाँ परिच्छेद।

गर्भाधान-विधि।

इस विषय में इस विद्या का अभ्यासी अपने और दूसरों के लिए बहुत कुछ कर सकता है। हज़ारों मनुष्य चाहते हैं, कि वे सन्तान का मुख देख सकें। हज़ारों पूजा-पाठ कराते हैं। कोई-कोई तो इसी धुन में अपनी प्रतिष्ठा भी खो देते हैं और धन भी गँवाते हैं; परन्तु उनको आशातीत सफलता नहीं होती; किन्तु इसका अभ्यासी इस विषय में बहुत कुछ कर सकता है।

स्त्री-सम्भोग केवल रात्रि के समय—जबकि भोजन अच्छी तरह से पच जावे—होना चाहिये। दोनों हर तरह से प्रसन्न चित्त हों। दूसरे किसी समय में, स्त्री का संसर्ग ही नहीं होना चाहिये। प्रातःकालके संभोग से शक्ति व्यर्थ ही नष्ट होती है। संभोग के समय पुरुष का स्वर सदा सूर्य्य चलना चाहिये। चन्द्रस्वर में गर्भ रहना असम्भव है। सूर्य्यस्वर के साथ तत्व का भी ख़याल रहे।

जलपृथ्वी क योग में, गर्भ रहे सो पूत।
वायु तत्व में छोकड़ी, और सूतके सूत॥
पृथ्वी तत्व में गर्भ जो, बालक होवे भूप।
धन्वन्ता सोई जानिये, सुन्दर होय स्वरूप॥

जल और पृथ्वी-तत्व में यदि गर्भ रह जावे, तो लड़का होता है—वह भाग्यवान् तथा सदाचारी होता है। यदि वायु-तत्वमें स्वर चले तो लड़की होती है। आकाश तत्व में गर्भ रहते हो यदि लड़का पैदा होवे, तो उसकी माता की मृत्यु हो जावे। इस तत्वमें एक तो गर्भ ही बहुत कम रह सकता है। अग्नि-तत्व में गर्भ रहता नहीं, यदि रहा तो गर्भपात का और स्त्री के मरने का भय रहता है। सूर्य्य स्वर में लड़का और चन्द्र स्वर में लड़की पैदा होती है। गर्भ उसी समय रहता है, जब कि स्त्री का चन्द्रस्वर चलता हो और मर्द का दाहिना (सूर्य) स्वर। यह सबसे अच्छा समय है। तत्व साथमें पृथ्वी या जल होवे। यदि स्त्री बाँझ है या और कोई खराबी है, तो लिखा है कि यदि पुरुष अपना दाहिना स्वर करे और स्त्री का बायाँ और दोनों का तत्व जल हो तो, बाँझ को भी गर्भ रह सकता है।

स्वर इच्छानुसार बदल सकता है। तत्व इच्छा और धारणाशक्तिसे बदल सकता है। अभ्यासीके लिए, जिसने स्वरको और तत्वोंको वशीभूत किया है, यह अति साधारण बात है।

वह अपने और दूसरेके ऊपर जो चाहे स्वर और तत्व बदल सकता है। ज्योंही तत्व का ध्यान किया कि, वह बदल जाता है।

इस सम्बन्धमें हिन्दुस्थानके प्राचीन आचार्य्योंने और बहुत-सी बातें बतलाई हैं, परन्तु उनका सम्बन्ध स्वरोदयसे नहीं है। लेकिन कुछ एक ऐसी आवश्यक बातें हैं; जिनसे अभ्यासी को बहुत-कुछ सरलता होगी।

यदि शुक्लपक्षमें गर्भ रहे तो लड़की हो, नहीं तो लड़का। कृष्णपक्षमें लड़की होती है।

यदि २-४-६-८-१२-१४-१६ इत्यादि दिनोंमें संभोग किया जावे, तो लड़का और यदि १-३-५-७-९-११-१३-१५ दिनों अर्थात् तिथियों में संभोग किया जावे, तो लड़की होती है।

यदि पुरुष स्त्री की अपेक्षा बलवान् है तो लड़का होगा—अन्यथा लड़की। चाहिए कि इन सब बातोंको मिलाकर काम लिया जावे, तो इच्छानुसार लड़का लड़की उत्पन्न हो सकते हैं।

यात्रा

दाहिने स्वर में जाइये, पूरब उत्तर राज।
सुख सम्पति आनन्द करे, सभी होएँ शुभ काज॥
बाँयें स्वर में जाइए, दक्षिण पश्चिम देश।
सुख आनन्द मंगल करे, जो जाए परदेश॥

यदि उत्तर और पूर्व की यात्रा करनी है, तो दाहिने स्वर में प्रस्थान करे। यदि पश्चिम और दक्षिण की यात्रा करनी है, तो बांये स्वरमें चले। इसके विपरीत चलनेसे हर प्रकारकी हानि उठानी पड़ती है; यानी घर भी वापिस नहीं आने पाता। कभी-कभी अकाल मृत्यु हो जाती है। लेखक को स्वयं अनुभव है, जबकि वह प्रयागसे छिन्दवाड़े के लिए रवाना हुआ था, रात्रिका समय था। ग्रामसे ही यह समस्या उपस्थित थी कि, रेलका समय रात्रिका है। यात्रा विशेष कार्यके लिए है। एक आत्मीय की बीमारी का हाल सुनकर जाना है। उस समय उसमें आश्चर्यकी सीमा न रही, जब रात्रिकी असमय ही चन्द्रमा स्वर और पृथ्वी तत्त्व चलने लगी। दक्षिण यात्रामें यह बहुत ही शुभ घड़ी गिनी जाती है। उसने इसका वर्णन उसी समय किया। छिन्दवाड़ा पहुँचने पर सब कुशल पाया। स्वरोदय-शास्त्र इस प्रकारसे भावी घटनाओंका पता बतलाता है और अनिश्चित भविष्य का एवं प्रकृतिके गुप्त भेदों का पर्दा खोल देता है।

जल पृथ्वी तत्व में चले, सुनो कान दे वीर।
सुफल कारज दोनों करे, कै धरती कै नीर॥

पृथ्वी और जल-तत्त्व की यात्रा सहायक यात्रा कहलाती है। आकाश, वायु व अग्नि-तत्त्वमें जो यात्रा की जाती है, उसमें बड़ी हानि होती है। एक आचार्य का कथन है कि

आकाश-तत्वमें यात्रा करे, तो यात्रामें मृत्यु हो या बीमारी हो। वायु-तत्त्व की यात्रा से बीमारी होती है। अग्नि-तत्त्व से किसी प्रकारका आघात होवे। निराशा और कार्यमें असफलता, इन तत्वों की यात्राके प्रधान लक्षण हैं। जब यात्रा को चले, तो देखे कि श्वास दाहिना है या बाँया। यदि श्वास दाहिना चल रहा हो, तो तीन पग दाहिने पैर पहले उठाकर चले—और एक क्षण ठहर कर वही पैर आगे रक्खे और चला जावे। इच्छित कार्य्य हो जावे। चन्द्रमामें बायें पैर को ४: बार पहले उठाना पड़ता है।

दाहिने स्वर में जाइए, दहिने डग धर तीन।
बाँये स्वर में चार डग, बाँयें कर प्रवीन॥

सुषुम्णा-स्वरमें कभी भी यात्रा नहीं करनी चाहिए; अन्यथा हर प्रकार की हानि ही होती है।

गाँव परगने खेत पुनि, इधर उधर सुन मीत।
सुष्मुणा चलत न चालिए, वर्जत है रणजीत॥

छठा परिच्छेद ।

प्रश्नोत्तर विधि

इसका अभ्यासी भविष्यका वर्णन बहुत अच्छी तरहसे कर सकता है। यदि वह तत्व और स्वरों के साधनको पूरा कर चुका हो, तो प्रश्नोंका उत्तर अति उत्तमता से दे सकता है। जब कोई आकर प्रश्न पूछे, तो देखो कि कौनसा स्वर चलता है और इस समय कौनसा तत्व चलता है। प्रश्नोत्तर करनेवालों को और स्वरोदय के प्रेमियोंको नीचे लिखे उपदेशों पर अवश्य रोज़ ध्यान रखना चाहिए।

(१) आज प्रातःकाल कौनसा स्वर चल रहा था? वह ग़लत तो नहीं है? अर्थात् वह विपरीत तो नहीं है? जिस तिथि या पक्षमें जो स्वर चलना चाहिए वह ठीक है या नहीं?

(२) आज कौन तिथि है? पक्ष कौनसा है?

(३) कौन दिन है?

(४) नक्षत्र कौनसा है और कबतक है?

जब कोई प्रश्न करे तो इन नीचे लिखी हुई बातों का ध्यान रक्खे;—

(१) प्रश्न करते समय कौनसा स्वर चल रहा है ?

(२) कौनसा तत्व चल रहा है ?

(३) लग्न कौनसी है ?

(४) प्रश्नकर्त्ताने किस दिशासे बैठकर प्रश्न किया है ?

(५) कौनसा नक्षत्र है ?

(६) कौनसी तिथि है ?

(७) स्वर अन्दर को जारहा है या बाहरको अर्थात् प्रश्न करते समय साँस अन्दर लेरहे हो या निकाल रहे हो ?

(८) प्रश्नकर्त्ताका कौनसा स्वर चल रहा है ?

(९) कौन दिन है ?

जिस दिन अभ्यासी का स्वर ठीक न हो—अर्थात् तिथिके अनुकूल न हो, उस दिन या तो प्रातःकालमें उसे शुद्ध करले या उस दिन-भर प्रश्नका काम न करे।

यदि इड़ा नाड़ी (चन्द्रनाड़ी) चल रही हो और प्रश्नकर्त्ताने नीचे से या पीछे से या दाहिने से पूछा हो, तो काम नहीं होगा। यदि स्वर पिङ्गला है और प्रश्न नीचे, पीछे या दाहिने से किया गया है, तो काम हो जायेगा।

नीचे पीछे दाहिने स्वर सूरज को राज।

यदि स्वर पिंगला है और प्रश्नकर्त्ताने प्रश्न ऊपर से या

सामने या बायीं ओर से किया है, तो काम न होगा। यदि स्वर इड़ा है और प्रश्न ऊपर, सामने या बायें से किया गया है, तो काम हो जावेगा।

यदि आकाश-तत्वमें प्रश्न किया गया है, तो प्रश्न दिल्लगीका है। यदि वायु-तत्वमें प्रश्न किया गया है, तो प्रश्न यात्रा-विषयक है। यदि अग्नितत्वमें प्रश्न किया गया हो, तो धातु-सम्बन्धी प्रश्न होगा। जैसे, रुपया पैसा इत्यादि। जलतत्वमें प्रश्न जीव के संबन्ध में है। पृथ्वीतत्व का प्रश्न 'मूल' विषयक होगा।

वायु-तत्व में प्रश्न यात्रा और कष्ट दूर करने के विषय में होगा। उत्तर दो कि फल मध्यम है।

अग्नि-तत्वमें प्रश्न धन, लाभ, हानि इत्यादिका होगा; उत्तर दो कि सफलता होगी, परन्तु परिश्रम के बाद। पृथ्वी-तत्व में पृथ्वी के संबन्ध में प्रश्न होगा—खेती बाड़ी देश इत्यादि सम्बन्धी होगा। उत्तर दो कि कार्य्य उत्तमता से पूरा होगा, परन्तु देरी थोड़ीसी ज़रूर होगी। जल-तत्व में प्रश्न जन्म, मरण, जीव का आना, प्रेम इत्यादि के सम्बन्ध में होगा। उत्तर दो कि, मन-मानी सफलता प्राप्त होगी।

जल पृथ्वी के योग म, जो कोई पूछे बात।
शशि घर में सूरज चले, कहो कारज हो जात॥

पावक और आकाश में, वायु कभी जो होय ।
जो कोई पूछे आय कर, शुभ कारज नहिं होय ॥

जल पृथ्वीमें दृढ़ताके काम किये जाते हैं। अग्नि और वायु दाहिने स्वरमें चरकारज से सम्बन्ध रखते हैं। जिस दिशासे प्रश्नकर्त्ता बैठ कर पूछे, यदि वह स्वर चलता हो, तो काम हो जावेगा, अन्यथा नहीं। यदि इड़ा स्वरमें प्रश्न किया गया है और तिथि इड़ाके अनुकूल है, तो काम बहुत अच्छी तरह हो जावेगा; अन्यथा कुछ विघ्न होगा।

दिन और नक्षत्र यदि स्वरके अनुकूल हों, तो काम शीघ्र ही हो जावेगा, अन्यथा—जितने अंश प्रतिकूल हैं, उतनी ही देरी से या विघ्नों से काम होवेगा।

यदि बहते स्वरकी तरफसे, अर्थात् चलते श्वासकी तरफ़ से बन्द स्वर पर कोई आकर बैठ जाये, तो कह दो काम में विघ्न है।

जब स्वर भीतर को चले, कारज पूछे कोय ।
पैजा बाँध वासों कहो, मनसा पूरण होय ॥
जब स्वर बाहर को चले, तब कोई पूछे तोय ।
वाको ऐसे भाखियो, नहिं कारज विधि कोय ॥
दहिने सेती आयकर, बाँये पूछे कोय ।
जो बाँयें स्वर बन्द है, सफल काज नहिं होय ॥

बाँये सेती आयकर, दहिने पूछे धाय।
जो दहिनो स्वर बन्द है, कारज अफल बताय॥

यदि प्रश्नकर्त्ता और अभ्यासी के स्वर एक ही हों और सब बातें मिलती हों, तो काम हो जायगा। यदि स्वर और तत्व दोनों मिल जावें तो काम अवश्य हो जावे। उत्तर देते समय इन सब बातोंका ख़याल रखना चाहिए। खूब सोच-समझ कर उत्तर देना चाहिए। कभी भी उत्तर झूठ न होगा।

गर्भ-सम्बन्धी प्रश्न।

प्रश्न—गर्भ है या नहीं?

उ०—यदि प्रश्न बन्द स्वर की ओर बैठ कर करे तो है—अन्यथा नहीं। काम होगा या नहीं, इस प्रकारके प्रश्नोंका निर्णय चलते स्वर से किया जाता है। परन्तु इसके प्रश्न बन्द स्वर से लिये जाते हैं।

प्र—इस गर्भ से लड़का होगा या लड़की?

उ०—अभ्यासी का बाँयां स्वर है तो लड़की और यदि दायाँ है तो लड़का पैदा होगा। यदि दोनों स्वर चलते हैं, तो दो लड़के पैदा हों या दो लड़कियाँ।

प्र०—लड़का या लड़की दीर्घायु होंगे या अल्पायु?

उ०—यदि प्रश्नकर्त्ता और अभ्यासीके स्वर एक समान हैं, तो लड़का या लड़की चिरायु हैं, अन्यथा अल्पायु। यदि वायु

तत्व है, तो गर्भपात हो या लड़की हो। सुषम्ना स्वरमें आकाशतत्व चलता हो, तो गर्भपात है। आकाश तत्व में हिंजड़ा पैदा होता है। यदि अभ्यासी का दाहिना स्वर हो और प्रश्नकर्त्ताका बायाँ और प्रश्नकर्त्ता यदि बांयी ओर से प्रश्न करता है, तो लड़का और उसकी माता दोनोंका देहान्त हो जाय। यदि पृथ्वी तत्व चल रहा हो, तो लड़की दीर्घायु हो। जलतत्व से सदाचारी लड़का हो। अग्नि-तत्व हो तो गर्भपात हो।

रोग-सम्बन्धी प्रश्न।

प्रश्न-उत्तर। यदि बन्द स्वर की तरफ से प्रश्नकर्त्ता चलते स्वरकी तरफ़ बैठकर प्रश्न करे, तो रोगी को आराम हो जायगा। यदि प्रश्नकर्त्ता और अभ्यासी दोनों एक ही तरफ़ हों, तो रोगीको आराम हो जावेगा। यदि नक्षत्र, लग्न, दिन, तिथि इत्यादि सब उस स्वरके अनुकूल हों, तो बहुत जल्द बीमारी दूर होगी, अन्यथा उतनी ही देरी होगी, जितनी कि इन सबकी अनुकूलता में भेद पड़ेगा। यदि प्रश्नकर्त्ता ऊपर से, ठहर कर, प्रश्न करे तो आसार बुरे समझे। यदि बहते स्वरकी ओर से आकर बन्द स्वर की तरफ़ आवे, तो बीमार मर जावे। यदि प्रश्नके समय बांये स्वर में जल या पृथ्वी-तत्व

हों तो शीघ्र ही आराम हो। वायु और आकाश तत्त्व प्रश्नके समय जारी हों, तो मरीज़ मर जावे; अन्यथा उसको—आराम हो।

यात्रा-सम्बन्धी प्रश्न।

यदि प्रश्नकर्त्ता और अभ्यासी दोनों का दाहिना स्वर चलता हो, तो यात्री शीघ्र ही वापिस आ जायगा। यदि दोनोंका बांया स्वर चलता हो, तो देर से वापिस आवे। यदि दोनों के स्वर भिन्न-भिन्न हों, तो बहुत देर में यात्री वापिस आवे। यदि चलते स्वर से आकर बन्द स्वर की तरफ़ बैठकर प्रश्नकर्त्ता किसी प्रकार का प्रश्न करे, तो कार्य्य कदापि न हो। सम्भव है, कि बना-बनाया काम भी बिगड़ जाय। यदि प्रश्नकर्त्ता बन्द स्वरकी तरफ़ से आकर चलते स्वर की तरफ़ बैठकर प्रश्न करे तो—चाहे उस काम में कैसी भी निराशा हो—वह काम बन जायगा। यदि उसी समय पृथ्वी या जल-तत्व चलता है, तो चाहे कितने भी विघ्न सामने हों, कार्य अवश्य पूरा हो जाय।

सुषुम्णा स्वर में यदि कोई प्रश्न किया जायगा, तो वह कभी भी पूरा न हो। परन्तु यदि सामने से ठहर कर प्रश्न किया जाय, तो उसका फल मध्यम है; सम्भव है कि कार्य्य हो जाय।

साधारण फल। यह बात स्वरोदय-शास्त्रियों में प्रसिद्ध है, कि जब कोई प्रश्नकर्त्ता आकर प्रश्न करता है और उस समय

यदि दाहिना स्वर चले तो काम बन जाता है। परन्तु यह भूल है, कभी-कभी इसमें उत्तर ठीक मिल जाता है, जबकि प्रश्न-कर्त्ता दाहिनी ओर बैठकर प्रश्न करता है; अन्यथा नहीं।

सातवाँ परिच्छेद।

भविष्य फल।

वर्षफल।

चैत्र मास में जब शुक्लपक्ष आरम्भ हो—उस दिन सवेरे यह देखे कि, कौनसा स्वर चल रहा है और कौनसा तत्व है। यदि संक्रान्ति का फल मालूम करना है, तो सूर्योदयके समय स्वर और तत्त्वोंका निरीक्षण करे। यदि बाँया तत्त्व चलता हो और उसमें पृथ्वी तत्त्व भी हो, तो वर्ष अच्छा है, राजा और प्रजा शान्तिपूर्वक रहेंगे; देश की वृद्धि हो, पानी बरसे, कृषि अच्छी रहे और अभ्यासीका भी वर्ष अच्छा जाय।

यदि जल-तत्त्व चलता हो तो वर्षा खूब हो। अनाज की उपज अच्छी हो। प्रजामें आनन्द और मङ्गल रहे।

जल और पृथ्वी तत्त्व तथा दाहिना स्वर चले, तोभी अच्छा फल होता है।

यदि प्रातःकाल सुषुम्णा स्वर चले; तो राजाका नाश हो या कोई दूसरा राजा राज्यारूढ़ हो। देखने वाला एक वर्ष में मर जाये और अकाल या दुर्भिक्ष पड़े।

आकाश-तत्त्वमें—दुर्भिक्ष हो, वर्षा न हो, प्रजा दुःखी रहे, राज्यमें उत्पात हो और घास भी कम हो। अग्नितत्त्व में अकाल पड़े, रोगादिक बढ़ें और वर्षा थोड़ी हो। वायुतत्त्वमें नगर में उत्पात हो, वर्षा थोड़ी हो और अकाल पड़े।

यह मालूम करनेके लिए कि, इस समय कौन दिनका दौरा है—यह मालूम करे, कि इस समय कितने घड़ी दिन चढ़ा है। सूर्योदयसे ढाई घड़ी तक उसी दिनका दौरा और बादकी २॥ घड़ी तक उसके छठवें दिनका दौरा रहता है। इस तरहके हिसाबसे मालूम कर ले, कि, इस समय किस दिनका दौरा है। उदाहरणके लिए आज रविवार है, पहली ढाई घड़ी रविवार-दूसरी ढाई घड़ी शुक्र-तृतीय-बुध इत्यादि।
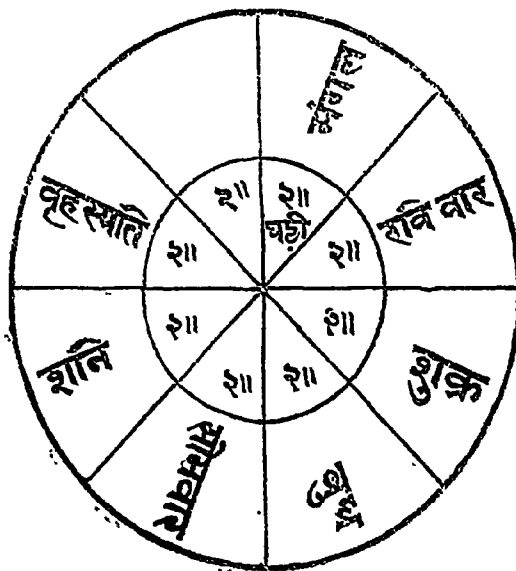
आठवाँ परिच्छेद।

कालज्ञान।

मृत्युके पूर्व ही मृत्युका हाल मालूम करना असाधारण बात है। परन्तु स्वरोदय-शास्त्रने इस विषयके अनुभव से कुछ सिद्धान्त निश्चित किये हैं, जिनसे मनुष्य बहुत पहले से ही अपनी मृत्युका हाल मालूम कर सकता है। यदि आठ पहर तक दाहिना स्वर चले और स्वर न बदले, तो जानो कि मृत्यु तीन वर्षके भीतर हो जावेगी। यदि १६ पहर दाहिना स्वर चले और बदले नहीं, तो दो वर्ष जीवनके शेष समझो।

यदि तीन दिन और तीन रात बराबर दाहिना स्वर चले, तो एक वर्ष जीवन का शेष है।

यदि सोलह दिन और सोलह रात दाहिना स्वर चले, तो एक मास जीवन शेष है।

यदि एक मास रात-दिन दाहिना स्वर चले, तो दो दिन जीवनके बाकी हैं।

यदि पांच घड़ी बराबर सुषुम्णा स्वर चले, तो मनुष्य शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हो। यदि मुँह से सांस निकलने लगे, तो अधिक से अधिक चार घड़ी वह और जीवित रह सकता है।

यदि बाईं सांस चार दिन या आठ दिन या इस से अधिक चले, तो अभी जीवन-यात्रा लम्बी है—शीघ्र ही समाप्त न होगी।

रातको दाहिना स्वर और दिनको बायाँ चले, तो मनुष्य दीर्घायु रहे। यदि रातको बायाँ और दिन को दाहिना स्वर लगातार एक मास तक चले, तो मनुष्य छै मास में मर जावे। यदि आकाश तत्त्व तीन रात और तीन दिन बराबर चले, तो मनुष्य एक वर्ष में मर जावे।

नवाँ परिच्छेद।

तत्वोंको वशमें लानेसे मनुष्य प्रकृतिके गुप्त भेदों को भली भाँति समझ सकता है और अपने जीवन को नियमित जीवन बना सकता है। तत्वोंको वश में करने का पहला साधन तो यह है, कि मनुष्य अपने सब काम स्वरके अनुसार करे—जिससे स्वर उसके अधीन हो जावें। दूसरा साधन यह है कि, प्रातःकाल या जिस समय मन साँसारिक झंझटोंसे निश्चिन्त हो, परन्तु प्रातःकाल का समय ही अच्छा होता है, उस समय आकाश में किसी स्थान पर दृष्टि जमावे। कुछ दिनोंके पश्चात् उसको रङ्गविरङ्गकी आकृतियाँ इधर-उधर आकाशमें फिरती दिखाई देंगी और अभ्यासके बाद जो तत्व अभ्यासीका चल रहा है, उसी का रंग आकाशमें दिखाई देगा। नेत्र बन्द कर लेने से भी वही रङ्ग दिखाई देगा। तृतीय साधन यह है कि, जब इतना अभ्यास हो जावे और तत्वों को आप भली भाँति पहचान सकें, तब रात्रिको तीन चार बजे सोकर उठें। सब प्रकारसे निश्चिन्त होकर आसन मारकर बैठ जायँ और मालूम करें कि, इस समय कौन सा तत्व चल रहा है। जब यह मालूम हो

जावे, कि इस समय कौनसा तत्व चल रहा है, तो इस प्रकार से साधन करें।

यदि आकाश-तत्व चल रहा है, तो उस समय यह ध्यान करें, कि वहुतसा प्रकाश है—जिसका कोई रूप नहीं है। उस समय (नँ) का जाप करें। यदि अग्नि-तत्व चल रहा हो, तो एक त्रिकोण आकृति का ध्यान करें—कि इसका रङ्ग लाल है—जो शरीरमें गर्मी रखती है, भोजन जिससे पचता है और यह देखो, कि तुम इस स्वरूप की गर्मी को एकाएक वरदाश्त नहीं कर सकते। इस समय (रँ) का जाप करो। यदि जल-तत्वका वेग है, तो अर्द्ध-चन्द्रमा का ध्यान करो, जो अति प्रज्वलित और अति निर्मल है। यह गर्मी और प्यासको दूर करता है। मानसिक योग के वलसे गहरे पानी में ग़ोता लगाओ। इस समय (वँ) का जाप करो। यदि पृथ्वी-तत्त्व चलता हो, तो चतुष्कोण आकृति का ध्यान करो, जिसका रङ्ग पीला है। इसमेंसे मीठी वास निकल रही है—जो कि सब प्रकार की वीमारियों को दूर कर सकती है। इस समय (हम) का जाप करो, यदि वायु-तत्व चल रहा है, तो गोल आकृति का ध्यान करो जिसका रङ्ग हरा है—जो तूफान में से पक्षीके समान ऊँचा उठता दिखाई देगा। इस समय शब्द (थम) का जाप करो।

इन तत्वों के साधने से मनुष्यको वड़ी भारी शक्ति प्राप्त हो जाती है। इन्हींके वाद मनुष्य योग और स्वरोदयका सम्बन्ध

समझ सकते हैं, इसकी स्वाभाविकता पर विश्वास ला सकते हैं। स्वरोदय-शास्त्रियों ने और शिवजी ने लिखा है कि, आकाशतत्त्व जिसके वशमें है—वह त्रिकालज्ञ हो जाता है। वायुसे अति बली हो सकता है। अग्निसे गर्मी बरदाश्त कर सकता है। जलतत्त्व से पानीका भय नहीं रहता। पानी बरसा सकता है। पृथ्वीतत्व से स्वाथ्य को बनाये रह सकता है।

कुछ समय अभ्यास करनेसे ये सिद्ध हो जाते हैं और फिर हमेशा के लिये ये अपने वशमें हो जाते हैं। इनसे बड़े-बड़े काम निकाले जाते हैं।

छाया पुरुष

मनुष्य क्या वस्तु है ?

विराट-दर्शन।

(१)

अविनाशी पुरुष निराकार है। सारी दुनियासे पृथक् है। वह सब जगत् में, सब मनुष्यों में, जल-थल में, सर्वत्र एकसा है। मनुष्य के मन और बुद्धिका वही प्रेरक है। सबसे पृथक् भी वही है। उसके बिना सारा संसार जड़ है। उस परमात्मा में कोई इच्छा नहीं उठती है। वही तुम हो। तुम अपने आप हो। तुम्हारे

बाहर कोई वस्तु नहीं है। समस्त भू-मण्डलका बीज तुम्हारे शरीरमें—मनमें—और बुद्धि में है। समस्त संसार का तुम में अन्त होता है। इसके आगे तुम्हारे शरीर का जो प्रेरक है, वही प्रेरक मूल-प्रकृति का है। इसलिए सब कुछ तुमही हो। सब तुम्हारा अपना आप है।

यह एक बड़ा गहन विषय है। बड़े-बड़े सिद्ध मुनीश्वरोंने इसे छोड़ दिया। योगी यद्यपि इसके यथार्थ अर्थ को समझता है, परन्तु बोल नहीं सकता, न वह लिख सकता है। कहीं नेत्रों की ज्योति की पुतली देख सकती है? कहीं मन बुद्धि, अहङ्कार, महत्ताकाश भी अपने चैतन्य अधिष्ठाता या स्वामी को देख सकते हैं? असंभव।

अति साधारण मनुष्य योगाभ्यास करके इसके भेदको जान सकता है। परन्तु भेद के जानते ही वह इसमें लीन हो जायगा। उस समय तुम समझ जाओगे कि, धर्म का असली हेतु क्या है। जिसको तुम अभी तक धर्म मान रहे हो, वह बाहरी—ऊपरी—आडम्बर है। निष्काम और पवित्र ब्रह्मविद्या और ही है। और इसी धर्म-मार्गका संसार के सब ही धार्मिक नेताओं ने आश्रय लिया है। यह ब्रह्म-विद्या तुम्हारे आत्मा का स्वाभाविक गुण है।

तुम्हारे स्वभाव के गुणका नाम ही योग है। मनुष्य, पुरुष, स्त्री, ब्रह्म, जो कहो वह यही है। शोक, कि हम अपने स्वभाव को भूले हुए हैं। जहाँ देखो दूकानदारी है। सांसारिक-

जन सुख के अभिलाषी अवश्य हैं ; परन्तु उन्होंने पदार्थ में ही सुख माना है। इच्छा—तृष्णा एक सूद-दर-सूद विषय है। यह एक ऐसी अपवित्र प्यास है कि, इसे यदि एक बार बुझाओ सौ बार उठेगी—दस बार बुझाओ, तो हज़ार बार प्रचण्ड होगी।

यदि किसी पदार्थ का ध्यान वर्षों तक लगा रहे, तो उस की पूर्त्ति के समय जो आनन्द आता है, उसका वर्णन अनुभवी लोग ही कर सकते हैं। वर्षों की वृत्ति उस पदार्थ की प्राप्ति के लिए एकत्रित हो रही थी। जब वह पदार्थ प्राप्त हुआ, मन थोड़ी देर के लिये एकाग्र हुआ। इसी मानसिक एकाग्रता को मूर्ख—संसारी—मनुष्य विषयानन्द कहते हैं। यथार्थ बात यह है कि, विषय की प्राप्ति में सुख नहीं है ; परन्तु वृत्तिके एकाग्र होने में सुख है। ऐसा उपाय क्यों न किया जाय कि, वृत्ति वर्षों तक एकाग्र रहे। योगाभ्यासी जानता है कि, सुषुप्ति अवस्थामें आत्मा को एक प्रकार से अवर्णनीय आनन्द प्राप्त होता है ; परन्तु सुषुप्ति से उठे किसी मनुष्य से आप पूछें, तो वह इस विषय में मौन रहेगा। जब इसका वर्णन करना कठिन है ; तब ब्रह्मानन्दका वर्णन कैसा? वह तो दूर की बात है। सुषुप्ति में जो आनन्द आता है, उसका कारण यह है कि, मन एक ऐसी उच्च दशाको प्राप्त होता है, जहाँ कर्म बीज-रूप बन कर कुछ समय के लिये सिमट जाते हैं:—

जसे कछुआ सिमटकर, आपहिं माहिं बिलाय।
तैसे योगी प्राणमें, रहे सुरत लवलाय॥

बहुतसे सज्जन इस मार्ग पर सन्देह करते हैं उनका सन्देह ठीक है। अन्धविश्वास अथवा "बाबा वाक्य" प्रमाण से यह सन्देह कई गुणा श्रेष्ठ है।

इसकी प्राप्ति के लिये अनुभवकी आवश्यकता है; अभ्यास की ज़रूरत है। आप सूक्ष्म-शरीर नहीं हैं; स्थूल नहीं हैं, कारण नहीं हैं। ये सब शरीर तो आप के आश्रित हैं। अभ्यास करने से पहले आपको यह शङ्का होगी कि कारण, सूक्ष्म, स्थूल, शरीर हैं या नहीं; अथवा मन की अटकल-पच्चू बातें तो नहीं हैं। अभ्यास करते-करते ये सब सन्देह दूर हो जायँगे। आप इस साधन को करें। आपको मालूम हो जायगा कि; इस स्थूल शरीर को छोड़ कर आपके अन्य शरीर भी हैं। इनसे परिचित होते ही आप अपने में लीन हो जायँगे और इस प्रकार थोड़े ही समय में आप का "लय-योग" सिद्ध हो जायगा।

साधन।
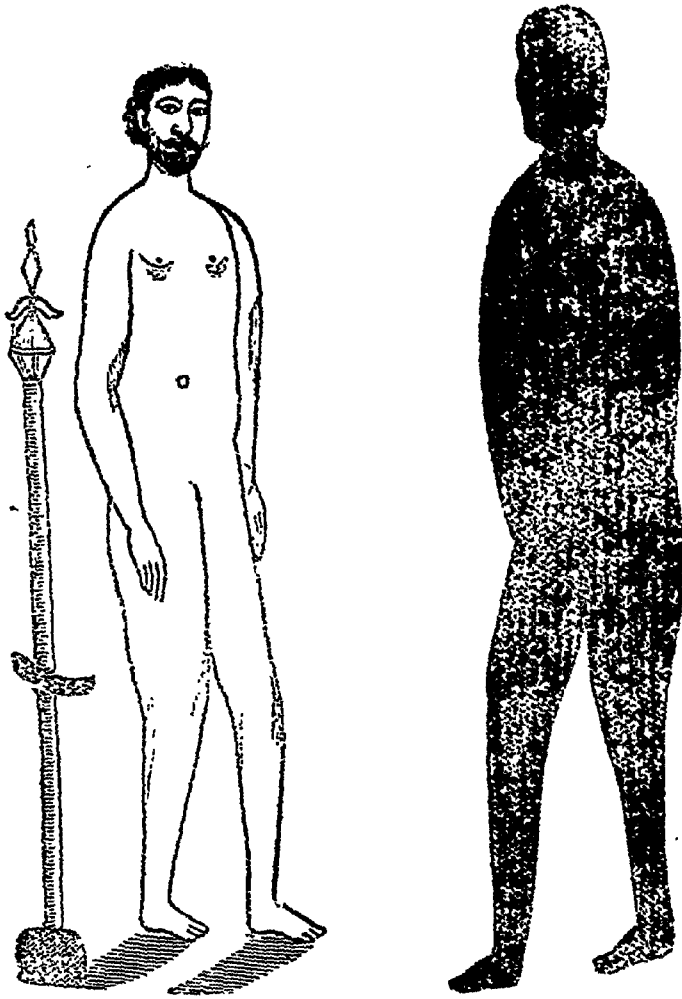
एक कमरा अपने लिये अलग एकान्तमें नियत करो। उसे वादली रंग से अच्छी तरह रंगा दो। दीवारें, छत, ज़मीन

सब आकाशमय हों। रोशनीके लिये दो-तीन दर्वाजे रहें, परन्तु सब पर आस्मानी रंग की चादरें पड़ी हों। अब तुम एक मीठे तेलका दिया जलाओ और अपने कण्ठ पर अपनी छाया की ओर देखना आरम्भ करो। एक घण्टे के पश्चात् दृष्टि हटाकर ऊपर लाओ, दस मिनिट देखते रहो। अहा! कैसा आनन्द आवेगा! फिर तुम उसी विचार में मग्न हो जाओ। किसी से बोलो नहीं, छाया-पुरुषका ही ध्यान बना रहे। दिन में तीन बार और रात में तीन बार तुम इसको करो—और दिन-भर इसी में मग्न रहो। सप्ताह बाद, बाहर निकल कर आकाश की ओर देख लिया करो; फिर अपने कमरे में चले जाया करो। ४० दिन में छाया-पुरुष सिद्ध होगा। तुम उससे बात कर सकोगे। छाया-पुरुष क्या है? तुम्हारे सूक्ष्म और कारण शरीर का सूक्ष्मांश। योगाश्रम तुम्हें सिद्धि के ढकोसलों में नहीं लाना चाहता है, परन्तु सीधा मार्ग बतलाना चाहता है, जिससे तुम अपना स्वरूप पहचानो। जो धोती या लङ्गोट बादली रंगका पहले दिन हो, वही चालीस दिन रहे। मौन रहने से गरमी बदन में बहुत पैदा होगी, अतः ठण्डी वस्तुयें खाओ।

विराट्-दर्शन

(२)

छाया पुरुषका साधन।

रात्रि के नौ बजे तुम एक ऐसे कमरे में जाओ; जहाँ पर कोई दूसरी वस्तु न रक्खी हो और न जहाँ किसी प्रकार का हल्ला होता हो। दरवाज़ा बन्द कर दो। अब तुम कमरेमें अकेले हो। सब कपड़े उतार डालो, यहाँ तक कि बिलकुल नंगे हो जाओ; दक्षिण की ओर मुँह और उत्तर की ओर पीठ करो। दीवार से इतनी दूर पर खड़े हो जाओ, कि एक चिराग़ पीठ के पीछे रखने से तुम्हारी पूरी छाया दीवार पर पड़े। पीठ के पीछे चिराग़ को भी जमा दो। यदि आपका कमरा तङ्ग हो, तो पृथ्वी ही पर छाया डाल सकते हो।

टकटकी बाँधकर अपनी छाया की ओर देखना आरम्भ करो। यहाँ तक कि टकटकीके लक्ष्य-स्थान कण्ठमें सूर्य्यका सा तेज—प्रकाश—दीखने लगे। बराबर एक घण्टा देखनेके पश्चात् अपनी नज़र दायें-बायें करो। इस प्रकार करनेसे योग्य-पुरुष को तीन ही दिनमें विराट् का दर्शन हो जायगा। पहले-पहल कमज़ोर दिल अवश्य ही स्वरूपके तेजको देख कर डरने लगते हैं और इस नये और अद्भुत चमत्कार को देखकर

घबरा जाते हैं; परन्तु याद रहे कि देवता किसीको कष्ट—तकलीफ़—नहीं देते। साधनके समय जिस मन्त्रका जाप करना चाहिये, उसे नीचे लिखते हैं। प्रयोक्ता अभ्यास के समय हाथमें माला ले ले और जपे। एक महीनेमें पूरे और स्थूल शरीर का दर्शन होने लगता है। तब माला लेने की कोई ज़रूरत नहीं है, केवल इस मन्त्रका ध्यान करना होगा; अर्थात् यह मन्त्र विराट्के आवाहन का है। इसके अर्थ का विचार करते हुए टकटकी बाँधनी होगी:—

मन्त्र—ओं ह्रीं परम ब्रह्मणे नमः।

इसमें "ह्रीं" मूल है और बाकीके सब विनय इत्यादि के हैं।

जब यह "ह्रीं" कहो, तब अवश्य ध्यान करना होगा। जिस प्रकार हम लिख रहे हैं, उसी प्रकार आरम्भ करो।

एक मास के पश्चात् देवताकी प्रसन्न मूर्ति तुम्हारे सामने आवेगी, जिसका शरीर सूर्य्यनारायण के तेजसे कई गुणा तेज़ चमकनेवाला होगा; परन्तु शान्तिप्रिय होगा, नाना प्रकार के रङ्ग बदलेगा, सैकड़ों प्रकारके संकेत करेगा, समय-समय पर उसके कई अङ्ग कटे हुए दिखलाई देंगे। जिस दिन छाया के धड़ पर शीश न हो या सिर कटा दिखाई दे, तो जान लो

कि छः मास के पश्चात् तुम निस्सन्देह मृत्यु को प्राप्त हो जाओगे।

एक सप्ताह तक मकान के भीतर ही इधर उधर देख लिया करो; फिर जल्दी-जल्दी बाहर आकर निर्मल आकाश की ओर देखना होगा; फिर एक मासके पश्चात् केवल मकान के भीतर ही देखना होगा।

यह काल-ज्ञान बताने का साधन छः मास तक करना पड़ता है। यदि एक वर्ष तक करोगे, तो जो वस्तु मँगाना चाहोगे, पल भरमें पास आ जायगी। बड़ी-बड़ी शक्तियाँ तुम में से प्रकट होंगी। तीनों काल (भूत-भविष्यत्, वर्तमान) का हाल तुम्हें मालूम होगा। यदि तीन वर्ष तक करोगे, तो ब्रह्म-रूप हो जाओगे। शिव जी महाराज, जो इसके प्रोफेसर हैं, कहते हैं—

शिव कहें सुन पार्वती, छायापुरुष की बात।
तीन वर्ष के अभ्यास से, ब्रह्मरूप हो जात॥

विराट-दर्शन।

(२)

आप स्वतः स्वपुरुषार्थ से विराट को सिद्ध कर लीजिये। एक बड़ा-सा दर्पण, जिसमें तुम अपना शरीर अच्छी तरह देख सको, कहीं से ले आओ (जिस दर्पणमें छाती तक ही

दीखे, वह भी काम दे सकता है)। दिनमें, किसी समय, अपनी नाक की नोककी ओर, एक घण्टे तक, विना पलक झप-काये, देखते रहो। जब थक जाओ, तो गर्दन उठाकर ऊपर की ओर—आकाशकी ओर—देख लिया करो। जिस दिन आपको श्वेत रङ्गका विराट दिखाई दे, उस दिन साधन सिद्ध हुआ जानो। प्रत्येक मनुष्य को एक सप्ताह के भीतर-ही-भीतर सिद्ध हो जाता है। जब आप को साधन करते-करते तीन मासका समय बीत जायगा, तो आप किसी भी वृक्ष, पर्वत, घर, मनुष्य पशु, पक्षी इत्यादि की ओर देखकर आकाशकी ओर देखनेसे उनके बुरे-भलेका हाल बता सकोगे।

परमात्मा की ओर से अच्छे या बुरे का फल पहले विराट पर पड़ता है, तब स्थूल शरीर पर। जिस बीमार का आप इलाज किया चाहते हैं, पहले उसका विराट् देख लीजिये। यदि धड़ पर सिर नहीं है, तो कभी भी अच्छे करने का बीड़ा मत उठाओ, वह कभी नहीं बच सकता। जिसके धड़ पर शीश हो, बेधड़क उसका इलाज करो, वह ज़रूर ही अच्छा होगा। यह योगियोंके घरका भेद है। इससे लाभ उठाओ।

मैस्मरेज़मका आरम्भ।

(१)

मीडियम को सबसे सरल रीति मैस्मराइज़ करने की यह है कि, एक निर्जन मकान में जहाँ किसी प्रकार का हल्ला इत्यादि न हो अपने सामने बैठाओ। उसको-मीडियम को,—पीठ उत्तर की ओर, और मुँह दक्षिण की ओर हो। उससे समझा कर (जैसा कि लेकचरमें कहा जाता है और जिससे किसी के मन पर असर पड़ता है) कह कि, तुम यह इच्छा करो, कि मैं मेस्मराइज़्ड—बेसुध—हो जाऊँ और मुझे एक मीठी नींद आजावे। उसको आज्ञा दो कि, वह तुम्हारी बाँई नेत्र की पुतली को अपनी दृष्टि का लक्ष्य बनाकर देखना आरम्भ करे, परन्तु आँख न झपके। तुम एकाग्रचित्त होकर उसके बायें नेत्र की पुतली को अपने देखनेका लक्ष्य मान कर,मन में यह दृढ़ इच्छा करो कि, वह बहुत जल्दी मैस्मराइज़्ड हो जाय; अर्थात् अचेत होकर पीछे गिर पड़े। यह भी

ख़्याल किये रहो, कि तुम्हारे हृदय से तुम्हारी इच्छा के साथ एक शक्ति उठती है, जो अभी मीडियम को बेसुध कर देगी। इसकी असल कुञ्जी भी आप के हवाले करते हैं कि, आकर्षण शक्ति जो अधिक या कम सब जीवों में वर्त्तमान है, अपने हृदय से उठ कर उसके मस्तक में जगह बना लेती है। धीरे-धीरे उसके विचार आप के विचार से हो जाते हैं और वह बहुत जल्दी ही बेसुध हो जाता है। जब मामूल—मीडियम—की आँखों में ज़रा सुस्ती—नरमी देखो, तब उसके दोनों हाथों के अँगूठे अपने हाथ में ले लो और उनको इस तरह मिला दो कि, तुम्हारी और उसकी शक्ति एक दूसरेके शरीर में जा सके। अँगूठे जब आप दोनोंके मिल जायँगे, तो बराबर आपकी और आपके मीडियमकी शक्ति एक दूसरेके शरीरमें आने जाने लगेगी। जब ऐसा होवे और उसकी शक्ति तुम्हारी ओर आवे, तो उसको भी मैसमराइज्ड करके उसकी तरफ भेजो और अपनी शक्तिको भी भेजो। इस रीति पर कभी दो तीन मिनटमें और कभी पाँच मिनटमें मीडियम बेहोश हो जाता है।

इस प्रकार करनेसे एक मिनिटमें कई चक्कर लग जायँगे। जब मीडियम पीछे गिर पड़े, तो तुम पास करना आरम्भ करो। यह विचार करो, कि हमने थोड़ी देर पहले जिस शक्ति को उसके मस्तक में भरा था, अब उसी को सारे शरीर में फैला रहे हैं। तुम शक्तिको आँखों और हाथों के द्वारा भरते जाओ। जब देखो कि मीडियम बहुत बेसुध हो गया है, तब

उसको बुलाओ। यदि न बोले तो कानमें ज़ोर से कहो कि "बोलो" इस पर वह अवश्य बोलेगा। उसके हाथ कभी नहीं लगाना चाहिये। इसमें लोग बड़ी भूल करते हैं। यदि वह इस पर भी न बोले, तो इतना काफ़ी समझो कि, किसी वस्तु से उस के हाथको ऊँचा करो, और कहो कि वह ऊँचा ही रक्खे। यदि वैसा रहने दे, तब तो कामयाबी पूरी है और जब हाथ भी खड़ा न रक्खे, बिल्कुल अचेत रहे, तो उसे दूसरी रीति से चेत में लाओ।

रीति—उस के कपालके सामने एक कोरा काग़ज़ लेजाओ और कहो कि रोशनी दीख रही है; जल्दी सुध में आओ। यदि वह कहे कि रोशनी दीखती है, तो धीरे-धीरे प्रश्न पूछना आरम्भ-करो। ज्यों-ज्यों प्रेक्टिस, अभ्यास, बढ़ाओगी, रहस्य खुलेंगे।

अद्भुत शक्ति।

यह देखा गया है, कि साधन करने के पश्चात् बहुत थकावट मालूम होती है। इसका कारण यह है, कि आकर्षण-शक्ति, जो मनुष्य की जान है, शरीर से बहुत निकल जाती है। यदि आप अपनी शक्ति किसी और साधनसे पूरी न करलेंगी, तो आश्चर्य नहीं कि किसी-न-किसी दिन आपको एक बड़ी भारी कमज़ोरी का सामना करना पड़ेगा। इसलिये साधक को चाहिये कि, वह किसी न किसी तरह अपनी शक्ति पूरी करले। हम एक साधन इस के वास्ते भी देते हैं।

सूर्य्यनारायण के सामने प्रातःकाल आँख मूँदकर खड़े हो जाओ और दृढ़ विचार करके प्रार्थना करो कि "भगवन्! हम को शक्ति प्रदान करो।" "भगवन्! हम को शक्तिप्रदान करो" इत्यादि। बस, पाँच मिनट रोज़ खड़े रहना पड़ेगा और शक्ति पूरी होती जायगी। मन से तमोगुणी विचार निकल कर शुद्ध सतोगुणी विचार तुम्हारे हृदय को जगादेंगे। इच्छा बिना भी सूर्य्यनारायण कमी पूरी कर सकते हैं, परन्तु इच्छा करनेसे झटपट कार्य्य सिद्ध हो जायगा। नेत्र खोल कर अभ्यास करनेका साधन भी अन्यत्र कहीं आया है।

मैस्मरेज़मके द्वारा बीमारियोंका इलाज।

तिब्ब यूनानी, भारतीय वैद्यक और अँगरेज़ी चिकित्सा में बड़ा भेद है। कोई दवा की तासीर बतलाने में भेद रखता है, कोई रोगों के निदान में भेद रखता है। विलायत में मैस्मरेज़म के द्वारा वर्षों से इलाज जारी है। वर्त्तमान युद्ध में घायल योद्धाओं की चिकित्सामें यह विद्या बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुई है। बीमारी गर्मी से है या सर्दी से, इसके जानने की हमें कोई आवश्यकता नहीं। पानी, राख, बादाम मिस्री आदि वस्तुओं पर प्रयोग करके बीमार को दे दिया जाता है, वह अच्छा हो जाता है। पुराने से पुराने बुख़ार इस से दूर हो जाते हैं। यदि रोग गर्मी से है, तो बांये हाथ

से आंकर्षण शक्ति छोड़नी होगी। यदि रोग ठण्ड से है, तो दाहिने हाथ से। यदि अपनी बीमारी दूर करनी है, तब भी यही तरीक़ा है।

जो रोग शोत से पैदा होते हैं, उनका इलाज भी इससे ही जाता है। यदि रोग गर्मी से है, तो एक तालाबके किनारे जाकर अपने मरीज़—रोगी—का ध्यान पानी में करें, कि जल-तत्त्व उसमें प्रवेश हो रहा है। चाहे रोगी कितनी ही दूरी पर हो, आप उसको बिना सूचित किये ही अच्छा कर सकते हैं। यदि वैसे भी किसी की मङ्गल-कामना के हेतु आपके दो चार मित्र मिल कर प्रार्थना करें अर्थात् आकर्षण-शक्ति को मौज पर लावें, तो आपके मित्र की दशा सुधर जायगी।

यदि रोग बहुत ही असाध्य है, तब आप छाया-पुरुष से सहायता ले सकते हैं। मित्रका फोटो लेकर उसके 'छाया-पुरुष' पर प्रयोग कीजिये। यदि अच्छा होनेवाला होगा, तो छाया पूर्ण होगी। आप प्रयोग करते जाइये। उसकी छाया को अपनी शक्ति प्रदान कोजिये, वह अच्छा हो जायगा।

नोट—इन सब साधनाओंसे कमजोरी अवश्य होती है, इसलिए सूर्यके साधनसे अपनी शक्तिको पूरा कर लिया करें।

सूर्य्योपासना।

—:⁕:—

इस साधन को विराट् का देखना भी कहते हैं। ॐ श्रीं भांग—यह सूर्यका बीज मन्त्र है। इस मन्त्र से सूर्य इधर आकर्षित होता है। सूर्य शक्ति की बहुत ही सूक्ष्म फिलासफी है। इस में अनादि भरी हुई है। सूर्य्य को ही परमात्माकी ओर से पहले-पहल उपदेश दिया गया था। पतञ्जलि का कथन है कि, सूर्यका ध्यान करने से योगी समस्त भूमण्डल का ज्ञान प्राप्त करता है।

'ओ३म् श्रीं भांग',—यह मन्त्र सूर्य से पृथक् नहीं है, न सूर्य इस से पृथक है। ॐ इस बिन्दु को शक्ति-रूप माना है, जिस के उच्चारण करने में, गगन-मण्डल में गूंज पैदा होकर सूक्ष्म हो जाती है और उसी समय अपने नाम वाले को आकर्षित करती है। बिना ॐ इसबिन्दु के कोई मन्त्र नहीं बन सकता।

छाया पुरुष के विराट् में और इसके विराट् में बहुत भेद है। छाया पुरुष के, विराट् में अभ्यासी को सब शक्ति अपने पास से देनी होती है; परन्तु सूर्योपासना में अपनी शक्ति खर्च करने की आवश्यकता नहीं। प्राचीन हिन्दुओं का यह सिद्धान्त था कि, मनुष्य की छाया में उतनी ही शक्ति होती है, जितनी कि उस पुरुष में होती है। महाभारतमें द्रोणाचार्य्य और एकलव्य की कथा भी इसी बात को सिद्ध करती है।

हम सब लोग ब्रह्मविराट् के नमूने पर छोटे-छोटे विराट् बनाये गये हैं। हमारे उदर के समान ही इस विश्व का उदर आकाश है। हमारे शरीर में नसें हैं, तो बाहरी जगत् में नदी नाले बह रहे हैं। विश्व के दो नेत्र हैं,—सूर्य और चन्द्रमा। हमारे भी दो ही नेत्र हैं। अभिप्राय यह है कि, जो पिण्ड में है, वही ब्रह्माण्ड में है। हमारे शरीर में अगणित छोटे-छोटे छिद्र हैं, जिनके द्वारा देखने से ब्रह्मानन्द का आनन्द अनुभव होता है।

यदि समस्त संसारका ज्ञान प्राप्त करना है, तो सूर्योपासना करो। संसार का सारा खेल इसी आँख पर है। संसार इसी से हरा-भरा रहता है। नारङ्गी को पहले दिन कड़वा, एक सप्ताह के बाद खट्टा और एक मास में मीठा, इसी की किरणें बनाती हैं। स्वाद और रङ्ग में परिवर्त्तन भी इन्हीं किरणों द्वारा होता है। जब यही विराट्-देव अपना चक्र समाप्त करके सूक्ष्म रूपमें लय हो जाता है, तब सब जीव अपने कर्मों की इच्छाओं को अपने में समेटते हुए उसके भीतर लीन हो जाते हैं। इसी को प्रलय कहते हैं। इसी विश्व के नेत्र से पुनः इस संसार की उत्पत्ति होती है।

साधन।

सूर्य का बीज-मन्त्र जो ऊपर लिखा हुआ है, उसे याद कर लें और फिर प्रातःकाल किसी निर्जन—एकान्त—स्थानमें

खड़े होकर सूर्य की ओर नेत्र खोल कर टकटकी बाँधें और ध्यानपूर्वक, एकाग्रचित्त होकर, सूर्य की ओर देखते हुए, मन में मन्त्र पढ़ते जावें *। मन्त्र का वज़न हृदय पर रहे, किन्तु जिह्वा अथवा होंठ न हिलें। इस साधन को निष्काम-भावसे आरम्भ करें; तब आप ब्रह्म-विराट् को भीतरी दशा अपनी आँखों से देखेंगे।

चन्द्रोपासना

महर्षि पतञ्जलिने लिखा है, कि चन्द्रमा पर ध्यान करने से योगी समस्त तारागणों का ज्ञान प्राप्त करता है। इस साधन के द्वारा प्रत्येक ग्रहसे हम सम्बन्ध जोड़ सकते हैं अथवा मङ्गलादिक तारोंका ज्ञान अन्तर्दृष्टि प्राप्त कर सकते हैं।

एक आदि संकल्प से धुंधकारसा होकर आकाश की उत्पत्ति हुई। आकाश के परमाणु इधर-उधर हिले। उनसे

---

* *इसके देखने के लिये नियत समय नहीं है। आप जितना अभ्यास करेंगे, उतनी ही सफलता आपको प्राप्त होगी। यदि एक घण्टा रोज़ देख सकें, तो ४० रोज़का साधन बस होगा। रात्रिको चन्द्रमा या आकाशकी ओर देख लिया करें।*

वायु की उत्पत्ति हुई। वायु की रगड़ मे अग्नि का प्रादुर्भाव हुआ। अग्नि से जल और जलसे यह पृथ्वी बनी। इसी प्रकार अनेक तारागण, अनेक लोक, अनेक पृथ्वीयाँ बन गईं। आपस में आकर्षण-शक्ति पैदा हो गई। इस पृथ्वी के प्रत्येक तत्त्व से और तारागणोंके आकर्षण से नये सामान बने। प्रथम जल को लीजिये। वह सूरज की गर्मी से भाफ बना। आगे यही जल चन्द्रमा से शक्ति, तरङ्ग और शीत पाकर बर्फ बना। चन्द्रमा के निरन्तर प्रभाव पड़ने से यह बिल्लौर के रूप में आया। जैसा कि आज हम देखते हैं कि, बर्फीले पहाड़ों पर बिल्लौर अधिक मिलता है। इसी बिल्लौर पर नव-ग्रहों ने अपना-अपना प्रभाव डाला; जिससे नौ रत्न हुए। तासीर और रङ्गत सबने अपनी-अपनी इस बिल्लौर को प्रदान की। उदाहरणार्थ लाल का रङ्ग लाल है। इसपर सूर्य का प्रभाव पड़ा। हीरा शीतल स्वभाव का और श्वेत रङ्गका है; इस पर चन्द्रमा का प्रभाव पड़ा। इसी भाँति जब पृथ्वी-तत्व पर इन्हीं नव ग्रहों का प्रभाव पड़ा, तब नौ धातुएँ बनीं। मनुष्य का नव ग्रहों से घनिष्ट सम्बन्ध बताते हुए, हम अब चन्द्रोपासना का वर्णन करते हैं।

साधन।

योगी को चाहिए, कि श्वेत वस्तुएँ जैसे दूध, चाँवल, मूली, दही इत्यादि ही खाय। कोई चीज़ गर्म, अभ्यास से पहले

या अभ्यास के बाद, न खाय। सब चन्द्रमा को रङ्गत और उसके गुणों के अनुसार ही हों। आपने कभी सोचा होगा, कि सूर्य जिस देशमें जाता है—वहाँ गेहूँ पकने लगता है। चन्द्रमा जिधर अपना चक्कर लगाता है, उधर चाँवल आदि श्वेत रङ्ग की वस्तुएँ पकने लगती हैं। मूँग बुध की तासीर पर है। बृहस्पत के साथ ही चने के खेत लहलहा जाते हैं। इस प्रकार प्रत्येक ग्रह अपने सजातियों पर असर करते हैं।

इस साधन को सोमवार से आरंभ करना चाहिये, जब कि चन्द्र शुक्ल पक्ष का हो। चन्द्र का स्थान इस शरीरमें मस्तक है और रङ्ग श्वेत और स्वभाव शीतल है।

'हंस' का उच्चारण त्रिकुटी में करो और यह ध्यान करते रहो कि, पूर्णचन्द्र यहाँ उदय हो रहा है। श्वास रोकने की कोई आवश्यकता नहीं। जहाँ तक हो सके, हर समय इसका ध्यान रहे। तीन मास का साधन है। साधन को तीन चार बजे रात्रि में या इधर नौ बजे रात्रि को करना चाहिये। इन दिनों आपको कम बोलना और शान्तचित्त रहना अत्यन्त आवश्यक है।

राजयोग

यम नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि,—ये आठ अङ्ग योग के हैं। इनके विधिपूर्वक अभ्यास करने से ज्ञान की प्राप्ति होती है। प्रकाश और अन्धकार का पारस्परिक विरोध है। ज्ञानके दीपकके आते ही अज्ञान का नाश हो जाता है। अष्टाङ्ग योग में यम और नियम चरित्रगठन के लिये हैं। देह, मन और वाणीसे किसी भी प्राणी को कष्ट न देना "अहिंसा" है। देश, काल या वस्तु का ख़याल न करके सदा सत्य बोलना योगाभ्यासी के लिए ज़रूरी है। भय, लोभ, दण्ड, अपयश, शत्रुता आदि की परवा न करना और जो बात यथार्थ हो वही कहना "सत्यनिष्ठा" है। कभी किसी को धोखा न देना और दूसरों के माल पर अथवा अधिकारों पर हस्तक्षेप न करना "अस्तेय" है। अपनी विवाहिता स्त्री को छोड़—चाहे विवाह किसी भी प्रचलित या नवीन प्रथा से हुआ हो—दूसरी स्त्री को

पत्नी-भाव से न देखना 'ब्रह्मचर्य' कहाता है। पीड़ित प्राणियों का दुःख निवारण करना और अपनी शक्तिके अनुसार उनकी सहायता करना, ब्रह्मचारी के कर्त्तव्यों में शामिल है। निर्धन और अनाथ मनुष्यों की सेवा करना, यदि शत्रु क्षमा चाहे तो क्षमा करना, दुःख के समय में दृढ़चित्त होकर रहना, कम खाना और कम बोलना, ये सब इसी के अङ्ग हैं। धन और सम्पत्ति को अपने हितार्थ ग्रहण न करना "अपरिग्रह" कहाता है।

नियम—योग का दूसरा अङ्ग नियम है। निश्चित समय पर काम करने की प्रतिज्ञा को नियम कहते हैं। शौच, सन्तोष, तप,स्वाध्याय और ईश्वर-प्रणिधान,—इसके अङ्ग हैं। इन्द्रियों को अच्छे कामों में लगाना, ईश्वर को सर्वव्यापक मानना, सन्तोषी रहना, निर्धनों को सहायता करना, सत्-सङ्ग करना, उसकी यथोचित पूजा करना, धर्म-पुस्तकों का पाठ करना, देश की सामाजिक या आर्थिक दशा का ज्ञान प्राप्त करना और अपने निर्धन भाइयों के दुःखोंको दूर करना,—तप और स्वाध्याय में शामिल है।

आसन—आसन चौरासी हैं। परन्तु साधारण नियम यही है कि, अपनी इच्छानुसार साधन के समय अभ्यासी बैठ सकता है। पद्मासन और सिद्धासन सबसे श्रेष्ठ हैं।

दायें पैर को बायें पैर की रान पर रक्खें और बाँया पैर दाहिनी रान पर रक्खें, कमर को झुकने न दें और उँगलियाँ

घुटनों पर हों, हाथ तने हों,—यह "पद्मासन" है। इसमें पीठ की तरफ़ से दाहिने हाथ को घुमाकर बायें पैर का अँगूठा और बायें हाथको घुमाकर दाहिना अँगूठा भी पकड़ा जाता है,

सिंहासन—दाहिना पैर मूलाधार पर रहता है और बाँया पैर गुदास्थान को दबाता हुआ नीचे रहता है। हाथ तने और उंगलियाँ घुटनों पर तनी रहती है।

प्राणायाम।

प्राणशक्ति।

प्राण किसे कहते हैं? साधारणतः, यह समझा गया है कि, शरीर में जो प्राणवायु स्थित है, वही प्राण का सर्वांश है। वास्तव में यह बात नहीं है। पूरक या रेचक तो शरीर में स्थित प्राण को, विश्वमें फैले, विश्वके आधार 'प्राण' से मिलाने के साधन हैं। महर्षि कपिल के मतानुसार यह संसार दो शक्तियों में बँटा है। एक का नाम आकाश है। इसी आकाश से वायु, अग्नि, जल अथवा पृथ्वी की उत्पत्ति हुई। दूसरी शक्ति का नाम प्राण है। इसी के प्रभाव से

आकाश इन रूपों में परिणत होता है। जिस प्रकार आकाश इस जगत् का कारणीभूत सर्वव्यापी अनन्तमूल पदार्थ है; उसी प्रकार प्राण भी जगत्-उत्पत्ति की कारणीभूता अनन्त सर्वव्यापिनी अथवा विकाशिनी शक्ति है। प्रलय के समय सारा संसार आकाश में लय हो जाता है और समस्त शक्तियां प्राणमें लय हो जाती हैं। यह प्राण ही आकर्षण-शक्ति के रूप में काम कर रहा है। प्राण ही मनुष्य की नाड़ी और नसों के भीतर जीवन प्रवाहित कर रहा है। वर्तमान साइन्स से यह मालूम होता है कि, वर्तमान में जितनी शक्ति है, वह सदा उतनी ही बनी रहेगी। कभी वह अव्यक्तसूक्ष्म अति सूक्ष्म अवस्था में हो जाती है; कभी व्यक्तरूप में होकर संसार के रूप में प्रकट होती है। आगे चलकर योग-मार्ग या वेदान्त ने इन दो अनादि तत्वों को एक कर दिया है।

इसी प्राण के संयम करने को, अर्थात् पिण्ड-शक्ति को ब्रह्माण्ड-शक्ति में मिलाने को, 'प्राणायाम' कहते हैं।

प्राणायाम सिद्ध होने से अनन्त शक्ति का द्वार अभ्यासी के लिये खुल जाता है। वह सूर्य, चन्द्र और तारागणों को अपना ही अङ्ग समझने लगता है। इसके पहले वह अपने को इनके आश्रित और प्रवाहोंके वशीभूत हो, अपनी स्वतन्त्र सत्ता को खोये हुए था। अब वह अपने को स्वतन्त्र अनुभव करता है। प्रकृति का धर्म है कि, एक से अनेक करे। पुरुष का कर्त्तव्य है कि अनेकत्व से एकत्व पर आवे

उपनिषद्कारों ने यह प्रश्न पूछा था कि,"कस्मिन्न भगवोविज्ञाते सर्वमिदं भवति" अर्थात् ऐसी कौनसी वस्तु है, जिसके जानने से सब कुछ जाना जाता है। योगियों का कथन है, कि मनुष्य के अन्दर एक असाधारण सत्ता है, जिसके समझने से सब कुछ समझा जा सकता है। इसी सत्ता के जानने की विधिका नाम 'योग' है।

जिसने प्राण को जय कर लिया, वह अपने ही शरीर, मन और बुद्धि पर विजय नहीं पाता ; परन्तु सबके देह, मन और आत्मा पर उसकी सत्ता का प्रभाव अङ्कित हो सकता है। क्योंकि प्राण ही सब शक्तियों का समष्टि-स्वरूप है।

प्राण-शक्ति किस प्रकार वशमें की जा सकती है, यही प्राणायामका उद्देश्य है। जगत् की सब वस्तुओं में शरीर सबसे निकट है। मन और भी निकट है। जो प्राण विश्व की शक्तिको चला रहा है, वही हमारे शरीर का स्वामी है। इसीलिए अपने शरीर और मन को केन्द्र मानकर, योगी प्राणायाम का साधन यहाँ से आरम्भ करता है।

प्रायः सब पर यह बात प्रकट होती जाती है कि, युक्ति और तर्क का क्षेत्र बहुत ही संकीर्ण है। कभी भी सत्यता की खोज इससे नहीं हो सकती ाणायाम और योगसाधन आपको इस चक्रसे बाहर लाकर, इस बन्धन से स्वतन्त्र कर देंगे। जब मन समाधि में स्थित हो जाता है, तब जिन विषयों का तर्कवादी (Logicians) ज़बानी अनुमान करते

हैं, उन्हें वह प्रत्यक्ष देखता है। योगाभ्यास से मनुष्य सृष्टिके रहस्य को समझ सकता है।

इस ब्रह्माण्ड में एक ही वस्तु है। जो पिण्ड में है, वही ब्रह्माण्ड में है। यथार्थ में सूर्यमें और तुम में कोई भेद नहीं है। वस्तु-भेद कल्पना मात्र है। एक टेबिल और एक मनुष्य में, वस्तुतः, कोई भेद नहीं है। अनन्त जड़ राशि का एक विन्दू टेबिल है; दूसरा पुरुष है। दोनों प्रकृति के बनाये पुतले हैं।

जगत्की समस्त वस्तुएँ ईथर (Ether) आकाश से बनी हुई हैं। इसलिये यह समस्त जड़ वस्तुओं का प्रतिनिधि माना गया है। योग इन्हीं सूक्ष्म तत्वों व आदि तत्वों का ज्ञान कराता है—जिससे प्रकृति का रहस्य समझ में आ जाता है और जिसके जानने के बाद किसी भी बात के जानने की अभिलाषा नहीं होती।

प्राणायाम के साथ श्वास-प्रश्वास का बहुत ही कम सम्बन्ध है। प्रारम्भिक साधनों के बाद, अपने को आकाशस्थ प्राणसे मिलाने के बाद, इन साधनों को करने की आवश्यता नहीं पड़ती, जैसा कि इसी ग्रन्थके अन्तिम परिच्छेद "सोऽहम्" से मालूम होगा। प्राणायाम-साधन में हमें प्राण को वशमें करना होगा। जब प्राण पर जय होगी, तब हमारे भीतर की सब क्रियायें हमारे वशमें हो जायँगी। इनके वश में होते ही, हमें इस विश्वके हिलाने के लिये एक केन्द्र

मिल जायगा और उस केन्द्र को आप अपने शरीर में ही स्थित पायेंगे। स्वामी विवेकानन्दजी ने एक स्थान में लिखा है कि, "मैं व्याख्यान दे रहा हूँ। व्याख्यान देते समय मैं क्या कर रहा हूँ? मैं अपने मनके भीतर एक प्रकार का कम्पन (मौज) उत्पन्न कर रहा हूँ। और मैं इस विषय में जितना कृतकार्य्य होऊँगा, मेरी बातें भी उतनी ही मुग्धकारी होंगी। तुम्हें मालूम है कि, जिस दिन मैं व्याख्यान देते-देते मग्न हो जाता हूँ, उस दिन मेरे व्याख्यानका प्रभाव भी अधिक पड़ता है।"

जगत् में जितने महापुरुष हो गये हैं, वे सब प्राण-जयी थे। इस प्राण-संयम के बल से वे महाशक्ति-सम्पन्न हो गये थे। वे अपने प्राण में मौज उत्पन्न कर सकते थे और उससे वे जगत् पर प्रभाव डाल सकते थे। उनकी इच्छा के बिना ही उनका प्रभाव सर्वत्र दिखाई देता था। आत्मोन्नतिका मार्ग सरल बनाना ही योग-विद्या का उद्देश है। जन्म-जन्मान्तरों का चक्र इससे नष्ट हो जाता है। वर्षों की उन्नति इस से दिनों और घण्टों में होती है। एकाग्रता का प्रयोजन ही यह है कि, शक्ति-सञ्चय की क्षमता को बढ़ा कर हम थोड़े समय में अपने आत्मा का साक्षात्कार कर सकें। राज-योग एकाग्रता द्वारा आत्म-साक्षात्कार करने का विज्ञान है।

कुण्डलिनी।

"किसी राजा का एक मन्त्री था। राजा उससे नाराज़ हो

गया और एक विशाल दुर्ग के सब से ऊँचे स्थान में उसने उसे बन्द करवा दिया। मन्त्री की स्त्री पतिव्रता थी। उसने रात्रिको पति के पास आकर कहा कि, मैं किस उपाय से आपको मुक्त करा सकती हूँ। मन्त्रीने कहा,—"कल रात्रि को एक लम्बा रस्सा, एक मज़बूत रस्सी, एक बण्डल सूत, थोड़ा सा रेशम, एक कीड़ा और थोड़ासा शहद लेती आना।" दूसरे दिन वह पतिकी आज्ञानुसार सब सामान ले आई। तब मन्त्रीने कहा,—"उस कीड़े के साथ रेशमके धागे को मज़बूती से बाँध करके, एक बूँद शहद उस के सिर पर डाल कर, उसका मुँह ऊपर की ओर करके दुर्ग की दीवार पर छोड़ दो।" उस पतिव्रता ने ऐसाही किया। तब उस कीड़े ने अपनी दीर्घ यात्रा आरम्भ कर दी। सामने से शहद की गन्ध आनेसे, कीड़ा उसके लालचसे, धीरे-धीरे चढ़ता हुआ दुर्ग के सबसे ऊपरी भाग में पहुँच गया। मन्त्री ने उसको पकड़ लिया और उसके साथ रेशम का धागा भी पकड़ लिया। तब उसने फिर अपनी स्त्री से उस रेशम के धागे में बण्डल के सूत को बाँध देने को कहा। धीरे-धीरे वह भी उसके हस्तगत हो गया। इसी प्रकार उसके पास रस्सा भी पहुँच गया। अब कोई कठिनता नहीं रही। वह उस रस्से की सहायता से दुर्ग से उतरा और भाग गया।"

यह एक उपाख्यान है। इसमें मानुषी जीवन का एक विचित्र रहस्य छिपा हुआ है। हमारे शरीर में श्वास-

प्रश्वास की गति रेशमके धागे को सी है। उसका संयम करने से स्नायुवीय शक्ति-प्रवाह (Nervous currents) रूपी बण्डली सूत, उसके बाद मनोवृत्ति रूपी रस्सी और अन्त में प्राण रूपी रस्से को पकड़ा जा सकता है। प्राण को जय करने से प्रकृति पर विजय प्राप्त हो सकती है।

हम अपने शरीर के बारे में बहुत कम जानते हैं। परन्तु जब से चिकित्सा-शास्त्र की उन्नति हो रही है, तब से प्राचीन योगियों के अन्वेषण की सत्यता सब पर प्रकट होती जा रही है। शरीर का स्तंभ मेरुदण्ड (Spinal chord) है। इसके भीतर इड़ा और पिंगला नाम के दो स्नायुवीय शक्ति-प्रवाह हैं और मेरुदण्ड की मज्जा के भीतर सुषुम्ना नाड़ी अर्थात् एक खाली नली है। इस नलीके नीचेके भाग में कुण्डलिनी शक्ति का पद्म है। वह त्रिकोणाकार है। उस स्थानमें कुण्डलिनी शक्ति सर्पिणी की आकृति की होकर विराजमान है। योगियोंने इसको बहुत महत्व दिया है। योग की प्रत्येक शाखा इससे सम्बन्ध रखती है। यह नागनी के समान है। यह साढ़े तीन लपेटे दिये हुए नीचेकी ओर मुँह किये सोयी हुई है। जब इसको जगाया जाता है, तब यह शक्ति बड़े ज़ोर से उठती है। मानसिक स्तरों का विकाश होता है। योगी को नाना प्रकारके चमत्कार दिखाई देते हैं। बिन्दु में वह समुद्र का अनुभव करता है। यही शक्ति जब मस्तक में जाती है, तब आत्मसाक्षात्कारका आरम्भ होता है।

स्वरोदय-शास्त्र के अनुसार इड़ा, पिङ्गला और सुषुम्ना,—ये तीन नाड़ियाँ कुण्डलिनी से उठ कर मस्तक के सहस्र-दल-कमलमें मिलती हैं। इड़ा बाईं ओर है—और पिङ्गला दाहिनी ओर। कुण्डलिनी शक्ति ऽ इस रूप में बढ़ती हुई मस्तक तक जाती है। बीचमें सुषुम्ना नाम की नाड़ी दौड़ती है। यह भी मुख्य नाड़ी है। जिस समय दोनों स्वर चलते हैं; अर्थात दोनों नासिकाके छिद्र खुले रहते हैं, उस समय इस नाड़ी का सम्बन्ध कुण्डलिनी से मस्तक तक साफ़ तौर पर दिखाई देता है।

मूलाधार से आरम्भ करके मस्तक के सहस्र-दल-कमल तक सात चक्र हैं। इन चक्रों को शरीर-शास्त्र के पण्डित (Physiologists) नाड़ी-जाल या प्लेक्सस (Plexus) कहते हैं। प्राचीन तत्ववेत्ता इससे परिचित थे। पैथागोरस और प्लेटोने संकेत किया है कि, नाभि के पास एक ऐसी शक्ति है, जो मस्तक की प्रभुता अर्थात बुद्धि के प्रकाश को उदरादिक स्वार्थरत इन्द्रियों तक पहुँचाती है।

यदि मेरुदण्ड में स्थित सुषुम्ना के भीतर से स्नायु-प्रवाह चालित किया जाय, तो हम को संसार भर का ज्ञान शीघ्र ही प्राप्त हो सकेगा। प्रत्येक चक्रमें आप नाना जगत् भासित देखेंगे। साधारण मनुष्य के भीतर सुषुम्ना नीचे की ओर दक्षिण मुख किये बन्द रहती है। यही नहीं; किन्तु मस्तकसे, अर्थात सहस्र-दल-कमलसे, जीवन-तत्वको यह सर्पनी पीती जाती है, जिस से मनुष्य की अवस्था नित्य घटती जाती है।

योगियों की सन्तान सदा दीर्घायु होगी, परन्तु वर्षों से हमारे देशसे योग-साधनका लोप हो गया है। वंश-परम्परा(Heredity) से हम सांसारिक हो गये हैं और इस अद्भुत सौर-तेज से हम सब वञ्चित हैं।

अस्तु, कुण्डलिनी को जगाना या चैतन्य करनाही तत्त्व-ज्ञान, ज्ञानातीत अनुभूति और आत्मानुभूति प्राप्त करनेका एकमात्र उपाय है। कुण्डलिनी को चैतन्य करनेके बहुत उपाय हैं। किसी की कुण्डलिनी भगवत्-प्रेम से चैतन्य हो जाती है; किसीकी सिद्ध महापुरुषों की कृपा से; जैसा कि स्वामी विवेकानन्दजी के साथ हुआ; और किसी की सूक्ष्म विचार व साधन के द्वारा होती है। जहाँ अलौकिक शक्ति या ज्ञान का विकाश देखा जाय, वहाँ समझना चाहिये कि, किसी न किसी प्रकार से कुण्डलिनी की शक्ति सुषुम्ना के भीतर चली गई है। कभी-कभी हम ऐसी अलौकिक घटनायें देखते हैं, जिनके होनेका कारण हम नहीं जानते; किन्तु अपरोक्ष में कुण्डलिनी की शक्ति किसी तरह सुषुम्ना में प्रवेश कर जाती है। जिसने इसका साधन किया है, वह प्रकृति के रहस्य से परिचित हो गया है। यही राजयोग का अन्तिम उद्देश है और राजयोग ही प्रकृतिधर्मविज्ञान है। यह समस्त उपासना, समस्त प्रार्थना, विचित्र प्रकार की साधन-पद्धति और नाना प्रकार की अलौकिक घटनाओं की वैज्ञानिक व्याख्या है।

प्राणायामका साधन।

प्राणायाम का आशय प्राणवायु के अभ्यास से है। इस संसार की उत्पत्ति 'प्राण' शक्ति से हुई है। यही प्राण हमारे शरीर में है। इस साधन के अनेकानेक लाभ हैं। जिस प्रकार घी से शरीर को शक्ति मिलती है, उसी प्रकार प्राणायाम से रक्त शुद्ध होता और सदा के लिये आरोग्यता प्राप्त होती है। नेत्रों की रोशनी तेज बनी रहती है। सोना जिस प्रकार तपाने से लाल हो जाता है, इसी प्रकार योगाभ्यास या प्राणायाम के साधन से शरीर को निर्मलता और मन को एकाग्रता प्राप्त होती हैं। जब ऐसा हुआ, तो अभ्यासी अपने आप को पहचानने लगता है और उसे हर जगह अपनी ही आत्मा दिखाई देती है। प्रत्येक सांसारिक वस्तु उसका ही पता देती है। दिल का मैल प्राणायाम से दूर होता है। लाखों जन्मों के सङ्कल्प, विचार, पाप-कर्म इत्यादि नष्ट होने लगते हैं। इसके बीज तक नष्ट हो जाते हैं। तदुपरान्त परमात्म-स्वरूप में स्थिति होती है। इसी से शिव, राम, कृष्ण, ब्रह्मादिक देवताओं का नाम बाक़ी है। वे स्वयं समाधिस्थ अथवा ब्रह्मलीन हो चुके हैं। प्राणायामका अभ्यासी इस प्रकार अपने इच्छित स्थान पर पहुँच जाता है।

शरीर में कुल दश वायु हैं। प्राण, अपान, समान,

उदान, व्यान, कूर्म, कर्कल, नाग, देवदत्त और धनञ्जय। इन सब की कुञ्जी या अधिष्ठाता प्राणवायु है। श्वास के आने जानेका काम इसीके सहारे चल रहा है। हृदय इसका स्थान है और सूर्य्य देवता है। अपान वायु का स्थान मुलाधार है। समान वायु नाभि में रहता है। देवता इसका सरस्वती है; कइयों के कथनानुसार विष्णु है। काम इसका सारे शरीर में रसादिक पहुँचाना है।

इसी कमल से शक्ति मौज पर आती है। कुण्डलिनी के जगाने में इस से बड़ी सहायता मिलती है। नीति पवन का वास यहीं पर है। उदान वायु का स्थान कण्ठ है। त्रिकुटी तक इस वायु का राज्य है। देवता इसका चन्द्रमा है। काम इसका त्रिकुटी से शक्ति लेकर समान वायु तक पहुँचाना है। 'स्वरोदय' में इड़ा पिङ्गला को मिला कर सुषुम्ना इसी मार्ग से प्राण दसवें द्वार पर चढ़ाती है। 'सोऽहम्' साधन में जब 'सुरत' स्थित होती है—तब यही अपना काम करती है। सिर नीचे व शरीर को उलटा कर जितने साधन किये जाते हैं, उन सब में इसकी सहायता ली जाती है। व्यान वायु सारे शरीर में है और देवता इसका पवन है। कूर्म के निवास-स्थान नेत्र हैं, देवता इसका प्रकाश है। कर्कल मेदेमें रहती है और देवता इसका मन्दाग्नि है। नागवायु का स्थान गला है—देवता शेष है। क्षय, और डकारादि का लाना इसका काम है। देवदत्त हृदय के पास रहती

हैं ; देवता इसका कामदेव है। धनञ्जय का स्थान शरीर है; देवता इसका ईश्वर है। मृत्यु के पश्चात् शरीर को फुला देना और शरीर से अलग न होना यह इसका काम है। अस्तु।

प्राणवायु की तासीर गर्म हैं और देवता इसका सूर्य्य है। यह वायु हृदय से उठकर १८ अङ्गुल बाहर जाती है। इसमें श्वास को अन्दर-ही-अन्दर खींचा जाता है और उसे हृदय, मस्तक, तथा समस्त शरीर में फैला कर रोका जाता है। इसके तीन भेद हैं। पूरक, रेचक, कुंभक। श्वास को बाहर से अन्दर लाने को पूरक कहते हैं। रेचक उसी ज़ोर से श्वास के उतारने को कहते हैं, जिस ज़ोर से साँस चढ़ायी गयी थी। इस में बहुत ही धीरे-धीरे साँस चढ़ाने व उतारने की ज़रूरत हैं।

प्रति दिन साँस कुछ अधिक रोकें। कुम्भक यथाशक्ति वायु के रोकने को कहते हैं। चित्त को एकाग्र रक्खें, कि किसी तरह का ख़याल पैदा न हो। आत्मा के साक्षात्कार में दत्तचित्त रहें। प्रातःकाल ३ बजे रात्रि, अथवा ९ बजे रात्रि का समय इसके लिये उपयुक्त है। प्राणायाम करने के पहले यदि स्नान कर लिया जाय तो अच्छा है; अन्यथा कम-से-कम मुँह हाथ तो अवश्य ही धो लेना चाहिये।

प्रथम तीन बार प्राणायाम करे, फिर इस को बढ़ाता जाय। भोजन के पश्चात् दो ढाई घण्टे तक इस साधन को

नहीं करना चाहिये। इसके मोटे-मोटे सिद्धान्तों को तो हर जगह लोग जानते हैं; परन्तु भेद और बारीकियां लोगों को मालूम नहीं। जिन को मालूम हैं, वे बतलाना नहीं चाहते।

प्राणायाम अस्सी बार तक कर सकते हैं; परन्तु एकदम से इस साधन को नहीं बढ़ाना चाहिये। एकाग्र होकर यह ध्यान करें, कि सूर्य्य और बिजली से करोड़ गुणा तेज हूँ—आनन्दरूप हूँ—चैतन्य हूँ—एक-रस हूँ—सूक्ष्म-से-सूक्ष्म हूँ। ऐसा अपना स्वरूप मान कर इस में लीन हो जावें।

प्राणायाम तीन प्रकार का है। कनिष्ट, मध्यम और उत्तम। कनिष्ट में पसीना आता है; मध्यम में शरीर काँपता है और उत्तम प्राणायाम में प्राणवायु ब्रह्मरन्ध्र में घुस कर आत्मद्वार को खटखटाता है। इसके बाद समाधि लग जाती है।

यदि ऐसा करते हुए; किसी अन्य कारण से मृत्यु भी हो जाय, तो भी सिलसिला बना रहता है और वह किसी योगी, योगिराज या वेदान्ती के घर में जन्म लेता है। उसको उन्नति के अच्छे अवसर मिले रहते हैं। गुरु के मिलते ही सब काम शीघ्र ही निपट जाता है। यदि पूर्ण योगी न भी मिले, तो भी क्या हर्ज है? अदृश्य हाथों से तुम्हारी उन्नति होगी। योगी की उन्नति को कोई भी नहीं रोक सकता। यदि तुम में योगाभ्यास करने की इच्छा है, तो

यही काफी सुबूत है, कि तुम्हारे शुभ कर्म उदय हुए हैं। अभ्यास में एकदम लग जाओ। अवश्य उन्नति होगी।

(२)

प्राणायाम में 'बन्धों' की भी ज़रूरत पड़ती है। मुख्य बन्ध तीन हैं। (१) मूलबन्ध (२) जालन्धर बन्ध, और (३) उड्डियान बन्ध।

१—<u>मूलबन्ध</u>—पूरक के समय में जब वायु अन्दर को आता है, तब इस बन्ध से काम लिया जाता है। बाँई एडी से मूलाधार व गुदा के बीच के स्थान को दबाते हुए अपान-वायु साथ ही चढ़ानी होती है; परन्तु यह अन्य आसनों के लिये है। सिद्धासन में स्वयं यह भाग दब जाता है और यह आसन ही मूलबन्ध का सा काम देता है।

२—<u>जालन्धर बन्ध</u>—यह उस समय लगाया जाता है, जब वायु उत्तम प्राणायाम के द्वारा ब्रह्मरन्ध्र को चढ़ रहा हो। कण्ठ को नीचे करके ठोड़ी को हृदय के बीच टेक कर अन्दर वायु को रोको।

३—<u>उड्डियान बन्ध</u>—वायु के उतारने के समय का यह साधन है। इसमें गुदा को अन्दरको सिकोड़ना और नाभि तथा सारे शरीर के अन्दर वायु को बाहर निकालते समय पीठ और नाभि को मिलाना होता है; अर्थात् रेचक करते समय नाभि को पीठ की ओर दबाना होता है। पीठकी रीढ़ की

Spinal Chord कहते हैं। यहाँही कुण्डलिनी स्थित है। नाभिको पीछे मिलाते समय उसके जाग्रत होनेमें सहायता मिलती है।

प्राणायाम के कई अन्य भेद भी हैं; परन्तु उनको यहाँ पर लिखना इस समय हम उचित नहीं समझते। बहुतसे शेखचिल्ली-प्रकृति वाले इन साधनों को बिना किये ही आगे के साधन पर कूद जाते हैं और अन्त में हानि उठा, इस विद्या को भी बदनाम करते हैं।

प्रत्याहार।

योग का पाँचवाँ अङ्ग प्रत्याहार है। प्राणायाम नियमित समय पर करना, दुःख और सुख को एक समान जानना, अनुभव के विरुद्ध कोई काम न करना, व्यसनों से दूर रहना तथा उनको नाशमान समझना, ये पाँच अङ्ग प्रत्याहार के हैं।

धारणा।

सुरत या विचार या सङ्कल्प को किसी तरफ़ लगाने को धारणा कहते हैं।

ध्यान।

जब 'सुरत' पूर्ण रीति से जमने लगे और किसी वस्तु में लीन हो जाय तो उसको ध्यान कहते हैं। और जब यही वृत्ति निश्चल रीति से सदा एक रस बनी रहे—चाहे—जाग्रतावस्था में ही क्यों न हो, तब—उसे "समाधि" कहते हैं। इसका वि त वर्णन और साधन . बह्मयोग के अभ्यासमें दिया गया है।

षट्-चक्र दर्शन (१)
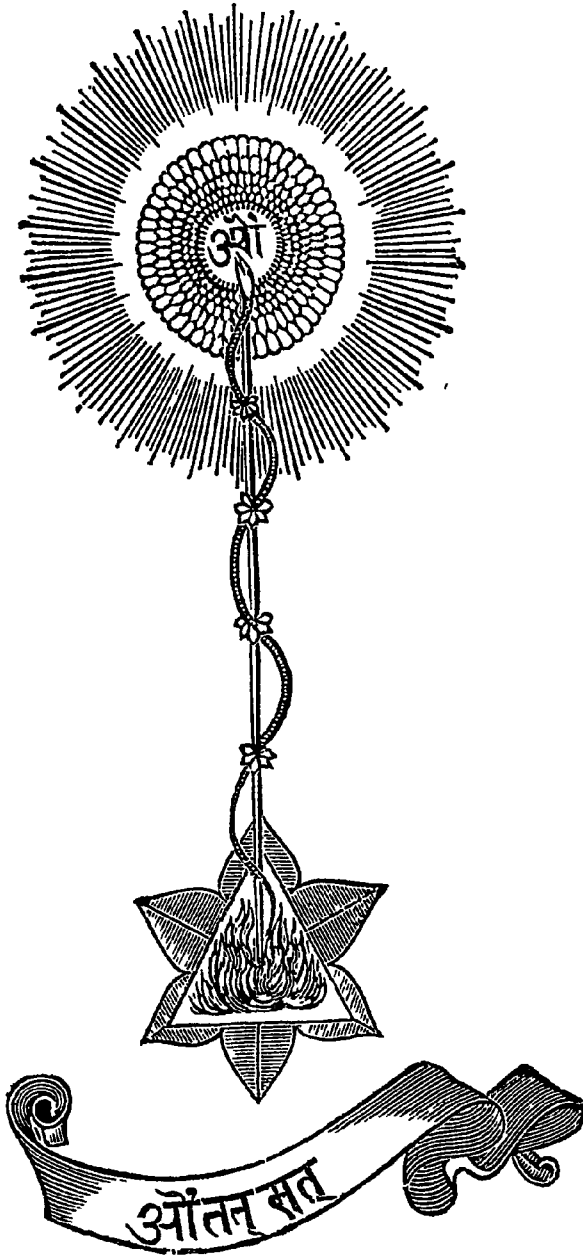
छठा अध्याय

वज्रयोग और षट्चक्र वेधन।

वज्रयोग।

प्राणायाम करने के पश्चात् इस साधन का करना बहुत ज़रूरी है। इसमें प्राणों को मूलाधार-चक्र तक ले जाकर, वहाँ बायीं तरफ़ से वायु को चक्कर देना होता है। कुछ समय में वायु उठने लगती है। इसको अपान वायु कहते हैं। जब यह वायु उठने लगे, तो नाभि-कमल में भी इसी प्रकार प्राणवायु को ले जाकर "नित्य-नारायण" यह ध्वनि उठानी पड़ती है। यहाँ भी वायु को बाईं ओर से प्रवाहित करना पड़ता है। साथ में मूलाधार से उठी हुई अपान वायु भी सहायता देती है। इस प्रकार से योगी को नाना प्रकार के दृश्य

दिखाई पड़ती हैं। इसके बाद षट्चक्रों के साधन को करना चाहिये।

चक्र सात हैं:—(१) मूलाधार, (२) स्वाधिष्ठान (३) मणिपूरक (४) अनाहत (५) विशुद्ध (६) आज्ञा (७) सहस्र-दल-पद्म।

प्रथम मास का साधन।

मूलाधार-चक्र तक योगी अपने प्राणों को ले जाय और जब देखे कि शक्ति स्वरूपिणी कुण्डलिनी का दर्शन होने लगा है; तब वहाँ "सोऽहं" का जाप करे। अर्थ सहित स्वाँस लेते समय "सो" कहे, और उतारते समय "हम" कहे। 'सो' शब्द भी मूलाधार कमल से उठना चाहिये और 'हम' भी वहीं से। "सः" का अर्थ है, वह आत्मा सत्त-चित्त-आनन्द 'अहम्' अर्थात् मैं हूँ। जाप इस प्रकार हो कि, बाहरी कान इसे सुन न सके। इस प्रकार प्रातःकाल और सायंकालको एक-एक घण्टा इस का जाप करें। पहले-पहल निश्चित् स्थान से ध्वनि उठाने में कठिनाई मालूम होगी; परन्तु शीघ्र ही यह विघ्न भी दूर हो जायगा। दिन-भर इसका ध्यान रहे, कि मैं सब का आदि कारण आत्मा हूँ। साधन के बीच किसी से बोलना मना है। बहुत कम बोले। प्रथम मास में यही साधन करना होगा। इससे मूलाधार-चक्र को खोलना होगा।

षट्चक्र दर्शन (२)

(१) Cerebral Plexus
शून्यचक्र (सहस्रदल कमल)
(२) Medullary आज्ञाचक्र
(३) Caroted विशुद्ध चक्र
(४) अनाहतचक्र Cardiac
(५) मणिपूरकचक्र Epigastric
(६) स्वाधिष्ठानक चक्र
Hypogastric)
(७) Pelvic मूलाधारचक्र
पिंगला
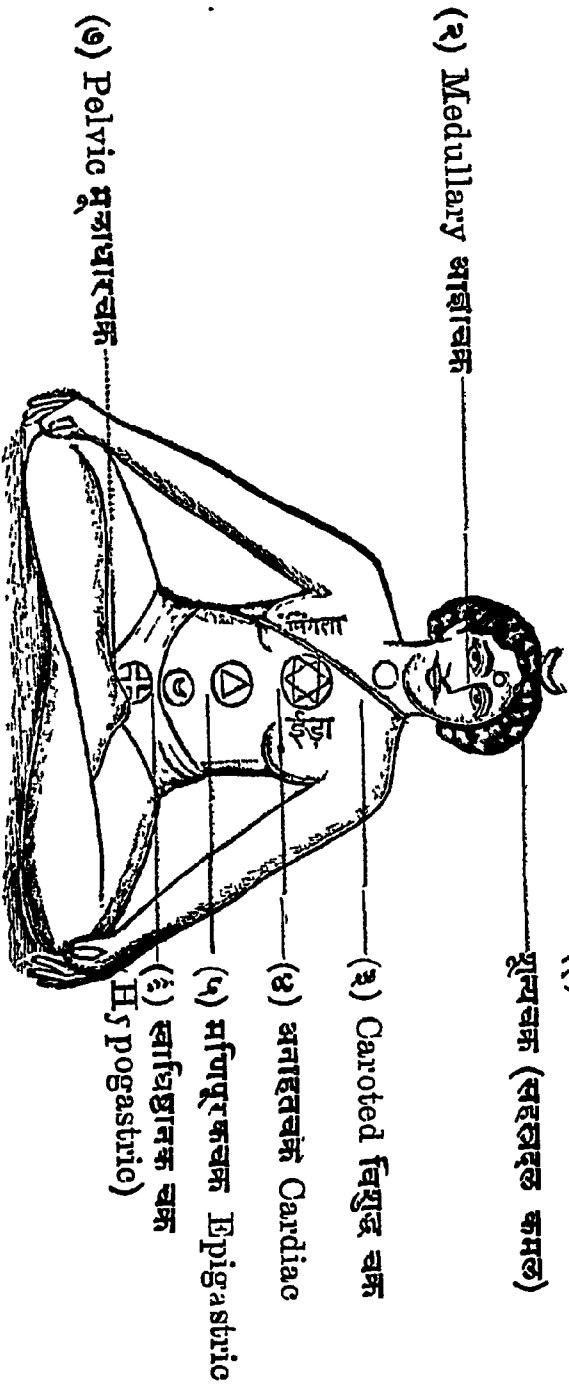
जब चक्र खुलने लगता है, तब चींटी की झुन-झुनाहट के समान आहट मालूम होती है।

दूसरे मास में स्वाधिष्ठान-चक्र का साधन करना होता है। यह चक्र नाभि और मूलाधार-चक्र के बीच में है। तीसरे मास में मूलाधार और स्वाधिष्ठान की शक्ति को नाभि-कमल की शक्ति से मिलाना होगा।

अभ्यास करते-करते मानसिक बल बढ़ जाता है। प्रातः-काल उठकर कुण्डलिनी की ज़रा ध्यानपूर्व्वक देख, यह सङ्कल्प उठाओ कि, मूलाधार की समस्त शक्ति श्वेत धुएँ के रूप में उठ कर और अपने साथ स्वाधिष्ठान-चक्र की शक्ति को लेती हुई—नाभि-कमल में आती है और यहाँ नाभि कमल को जगाने में सहायता देती है। यहाँ भी नाभि-कमल से 'सोऽहम्' का विधिपूर्वक जाप उठाओ। ऐसे ही चौथे मास में ज्योतिःस्वरूप सोऽहम् का जाप हृदय-कमल पर करो। पाँचवें मास में कण्ठ पर, छठे मास में त्रिकुटी पर और सातवें मास में गगन-मण्डल में इसका जाप करो। एक दिन आप से आप समाधि लग जायगी और फिर जितने घण्टे की समाधि की इच्छा करोगे, उतने घण्टे बराबर रहेगी। यदि बिना इच्छा किये समाधि लगाओगे, तो ब्रह्मपद प्राप्त होगा और समाधि सदा बनी रहेगी।

चार कमल दल मूल विराजे, चारों वाणी धाई हैं।
लोकन मय भव रचित विधाता, षट्दल स्वाधिष्ठाई हैं॥

अब ते रची हरिजन पालें,नाभि दश दल आई है।
अब-अब रहित करत शिवशंभू,दल बारह हृदयाई है॥
अब में रहती शक्ति विशुद्धा—सोलह दल कंठाई है।
अब सूरज वं चन्दा अंग्री—तीनों नाडि सुहाई है॥
त्रिकुटी घाट में भई त्रिवेनी, द्वय दल भँवर समाई है।
भँवर गुफ़ा कर यह दरवाज़ा, आज्ञा चक्र सदाई है।
सहस कमल दल गुरु बिराजें, देते पन्थ चलाई है।
जो चलि जायें ब्रह्म तब दर्सें, भँवर नाथ चिरधाई है॥

इस साधन में जितना कष्ट उठावेंगे—अर्थात जितना समय व्यतीत करेंगे, उतनी ही शीघ्र उन्नति होगी। इन साधनोंके नियमित साधनसे योगी मृत्युको जीत लेता है।

त्रिकुटी ध्यान।

प्रयाणकालेमनसाऽचलेन
भक्त्यायुक्तोयोगबलेनचैव।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्यसम्यक्
सतंपरं पुरुषमुपैतिदिव्यम्॥ [गीता]

यह साधन सवेरे चार बजे किया जाता है। इसके वास्ते एक अलग कमरा होना चाहिये, जो कि सुगन्धित वस्तुओंसे भरा हो। जब सब तरह से तय्यार हो जाओ, तब एक पवित्र नरम गद्दी लेकर आसन जमा कर और अपने नेत्र मूँदकर

उस स्थानको देखो, जहाँ शिवजीका तीसरा नेत्र हिन्दू-शास्त्रों में माना गया है। यह स्थान ललाट में है, जहाँ पर हिन्दू लोग तिलक लगाते हैं। नेत्र मूँद कर पहले-पहल बहुत समय तक नीली ही ज्योति दिखाई देगी। उस ज्योति को ध्यानपूर्व्वक-देखते ही एकदम परदा उलट जायगा और एक अद्भुत आनन्द और शान्ति प्राप्त होगी। तुम्हारा मन यही चाहेगा, कि सदैव इसी की ओर ध्यान लगाये रहें। यदि कोई तुम्हारे साधन में विघ्न डालेगा तो, तुम उसे शत्रु सम समझोगे और कहोगे कि हाय! तुमने ग़ज़ब किया, कि हम को ब्रह्मानन्द से पाप-सागर में खींच लाये।

अँधेरे में जब नेत्र पर उँगली लगती है, तब एक ज्योति दिखाई देती है, यह वही ज्योति है। अन्तमें जब यही ज्योति श्वेत रङ्गमें पलटा खाने लगी, तब तुम जानो कि उन्नति के द्वार पर हम पहुँच गये हैं, परदा उठने वाला है, बहुत शीघ्र ही ब्रह्म--ज्योति का दर्शन होगा, बुद्धि दिन-दिन बढ़ती जायगी और मुँहकी कान्ति दिन दूनी होगी।

राधास्वामी-मतवाले इसी ज्योतिके उपासक हैं। पहले-पहल वे राधास्वामी की मूर्त्ति का ध्यान करते हैं, जो हूबहू स्थूल रूप में सामने आ जाती हैं। पीछे त्रिकुटी ध्यान का साधन करते हैं। धीरे-धीरे परदा उठता जाता है। यदि कुछ भी करोगे तो कहोगे कि हमने क्या लिखा है।

विशुद्ध चक्र
कंठ में
जीव
आत्मा उदान
वायु
जप
१०००

स्वाधिष्ठान चक्र
गुदा के ऊपर
वं
ब्रह्मा
सर्वशरीरमें
व्यान
जप
१०००

आज्ञा
चक्र
दोनों भौंवोंके
मध्यमें
हं
गुरु
क्षं
जप
१०००

मणिपूरक
चक्र
नाभिमें
फं
डं
ढं
णं
तं
थं
दं
धं
नं
पं
विष्णु
समान वायु
जप
६०००

अनाहार
चक्र
हृदयमें
सदाशिव
प्राण वायु
जप
६०००

ब्रह्मरन्ध्र
चक्र
ब्रह्माण्डमें
परमात्मा
सहस्त्र दल
जप
१०००

मूलाधार चक्र
लिंग गुदाके ऊपर
वं
गणेशजी
अपान वायु
शं
सं
स्वं
जप ६००
अजपा जाप

सातवाँ खण्ड

सोऽहम्

टेक—

अनुभव स्वरूप निज रूप लखा

जिन सोहम्-सोहम् रटा रटा।

अक्षय धन निर्भय मिल जावे

तृष्णा कबहुँ पास न आवे,

कर सन्तोष बैठ रह घर में

मत बाहर फिर उठा-उठा।

जीवनमुक्त सुख जो तू चाहे,

निर्भय और क्या जतन बतावे ?

ब्रह्मानन्द से पूरण होजा,

विषय-आनन्द को घटा-घटा।

राग अरु द्वेष नष्ट हो जावे,
चहुँ दिशि एकहि भाव दिखावे।
निर्भय रहो निश्चय यह राखो
दृष्टि दृश्य से हटा-हटा।
नाम रूप गुणने है लीना
सत् चित् आनन्द भाव हमारो।
माखन-माखन खालो निर्भय
छाँड़ि चलो तुम मठा-मठा।

सोऽहं-हंसः-सो।

योगी ज्यों-ज्यों जिज्ञासु के समझने की शक्ति मालूम कर लेता है कि, सुनने वा समझने के साथ उसे अपना स्वरूप भी दिखाई दे और उसमें लीन होता जाय, त्यों-त्यों सोहम् की साधना शनैः शनैः बतलाता है। सोहं और हंसः एक ही बात है, व्याकरण की सन्धि से शब्द और-का-और बन गया है, दोनों का अर्थ और तासीर एक ही है। कोई सोहं का जाप करते हैं, कोई हंसः का और "सो" जो अन्त की बात है, उसका भेद श्रुति ने भी छिपा रक्खा है। उस का बतलाना

शुरू पर छोड़ दिया गया है; कारण कि मनुष्य जो कुछ देखता है, वह उसके ही विचारका फल है, जैसा भीतर बीज हो वैसा सामने वृक्ष की तरह सामान दिखाई पड़ता है। ज्यों-ज्यों भीतर शुद्धि होती जाती है, बाहर भी सब शुद्ध ही नज़र आने लगता है। जब तक दिल में मान रहा है कि अमुक मेरा शत्रु है, तब तक यह बीज दूसरे को उसका शत्रु बना रहा है।

जिस प्रकार दियासलाई डब्बी पर रगड़नेसे सुलग जाती है, उसी प्रकार अन्दर का बीज सामने अपने स्वरूप पर तासीर डाल कर वहाँ रगड़ पैदा करता है और वहाँ से असर फिर उठकर इधर आता है तथा दोनों ओर से ऐसी तरङ्गों के होने के कारण बढ़ता जाता है। यदि दियासलाई को पानी में भिगो दिया जाय या मसाला हटा दिया जाय, तो फिर अग्नि पैदा होकर उसकों न जला सकेगी। तुम इस सोहंके विषय के पढ़ने से पहले, यदि हज़ार शत्रु मान रहे हो, तो एकदम इस सङ्कल्प को उड़ा दो। कभी भी, एक पल भी, किसी प्रकार की शत्रुभाव-उत्पादक लहर या सङ्कल्प अन्दर न जाने दो। इससे उधर भी कोई बुरा विचार तुम्हारे बारे में न पैदा होगा। तुम अटल विश्वास से इधर स्थित रहो, यहाँ तक कि इस सङ्कल्प के त्याग के विचार तक को भूल जाओ। जब ऐसा होगा, तब इस सङ्कल्प का बीज नाश हुआ जानना। इससे प्रकट यह करना, कि योगिजनों का सिद्धान्त यह है, कि जब तक मुक्ति या ईश्वर-प्राप्ति का ध्यान है, तब तक द्वैतभा

और कुछ कसर शेष है। जब सच्चिदानन्द-भाव प्राप्त हुआ; आप-से-आप मौन-दशा होती है।

सोहं की साधना चाहे विधिपूर्वक की गई हो या और किसी गुप्त विधि से इसका असर हो चुका हो, जो आपको मालूम न हुआ हो या पहले समय का कुछ साधा हुआ हो तब "सो" इस पद की दशा समझ में आ सकती है। इसे समझते ही जिज्ञासु अपने आप में लीन हो जाता है।

सोहम् के साधन में पैर रखते ही संसारी दुःख, हर प्रकार की आफ़त बला सब दूर हो जाती है और आत्मानन्द-पद प्राप्त होने लगता है।

१ अभ्यास से योगी अपने को पाता है। अन्दरूनी और बाहरी दोनों प्रकार के सङ्कल्प और इच्छायें तथा कर्म करने की शक्ति ये सब उसके वश में होती जाती हैं और मन सब कामों से विरक्त होता जाता है।

प्रथम जिज्ञासु को इस तरह इस साधन का अभ्यास करना चाहिये, कि क्षेम आसन लगाकर बैठे, डर और खुशी को मन से दूर करे। क्षेम का अर्थ भरोसा है, अपने पर आप भरोसा हो। "सो"—का अर्थ 'सो यह स्वरूप' अर्थात् 'सब कुछ' (सत्-चित्-आनन्द) और "हं" अर्थात् मैं, इस सोहं के अर्थ का ध्यान करना होता है। अभ्यासी सवेरे-शाम या रात को जब-जब समय मिले, एकान्त स्थान में चुपचाप क्षेम आसन लगाकर दोनों आँखों की टकटकी अपनी नाक की

नोक पर बाँधे और साँस धीरे-धीरे अन्दर खींचे, तब "सो" कहे और बाहर निकाले तो "हम्" कहे। इस साधन को बढ़ाता जाय। आँख न झपके। सब कुछ मैं ही हूँ, इसका जाप करे।

"एक अजपा जाप होता, सोऽहं इस का नाम है।
रत्न यह अनमोल होता, ये यतन मुदाम है।
इक्कीस हजार और छैसौ वारी, रातदिनका जाप हो।
योगी उचारे समझ कर, तो जगत् में परताप हो॥
मुँह को बन्द कर आँख मूंद, कान को भी बन्द कर।
लेवे श्वासा "सो" कहे, बाहर निकाले "हम" कहे॥
तीनों कालों का ज्ञान हो, और मन पापी हो वशी।
है यह साधन ऐसा स्वामी, मिलती इससे शान्ती॥

इधर ही ध्यान रक्खे। कभी-कभी यह शब्द अनुभव से उच्चारण हो जाता है, कि मेरा मन दुःखी है, शरीर कमजोर है, दर्द करता है इत्यादि। इससे सिद्ध हुआ, कि शरीर और मनसे परे कोई जाति विशेष है, सोहं का वही स्वरूप है और इसी स्वरूप के सूक्ष्म तत्त्व को तुम इस उपासनाके साथ नाक की नोक पर देखोगे। (अध्याय ६ श्लोक १३—१४) गीता में नासाग्र साधन श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् योगिराज ने कहा है। परन्तु न कोई गीता का अर्थ समझता है, न साधन करता है, इसीलिये अपनी जाति की विद्या गैर जाति की विद्या बन गई है।

ज्यों अलिफ़ का, लाम के अन्दर मकाँ ।
इस तरह गुम हो, तो हो जावे अयाँ ॥
आब जो जब, बहर में जाकर मिला ।
फिर भला, दरिया में उसका क्या पता ।
बहर अरफ़ाँ से, हुआ जो आशना ॥
क़तरे क़तरे से, उसे हक़ मिल गया ॥
दूसरी सूरत से गर दरिया बहे ।
असल में पानी का पानी ही रहे ।
तन है तेरा जैसे पानी का हबाब ।
मिट गया फिर क्या रहेगा ग़ैरआब ।

भावार्थ—जिस प्रकार "अलिफ़" "लाम" में है, इसी तरह परमात्मा सर्वत्र व्याप्त है। पानी जब समुद्र में मिल गया, तब उस को कौन अलग कर सकता है और कौन उसको पहचान कर अलग निकाल सकता है? सर्वगुण उस में जल के वर्तमान हैं, नदी चाहे जैसी बहे परन्तु पानी वही रहेगा। यह तेरा शरीर पानी के बबूलेके समान है, इसके मिटते ही अर्थात् इसका ध्यान मिटते ही सिवा परमात्मशक्तिके क्या रह सकेगा?

मन कर्मों के समूह का नाम है। चिन्तामणि का गुण इसमें पैदा हो गया है। मणि अपने आस-पास की वस्तुओं का गुण, रंग और स्वरूप धारण कर लेती है। यही हाल इस

मन का है। वस्तुतः यह कोई वस्तु ही नहीं है, तथापि "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः।"

मन ही मनुष्यके मोक्ष और बन्धन का कारण है। इसका स्वभाव ध्यान देने योग्य है। जिधर यह ध्यान लगाता है, यह वही हो जाता है। यदि संसार में लग जाय, तो संसार का स्वरूप हो जाय; आत्मा में लगे तो स्वयं आत्मा हो जाय।

मोर के अण्डे में जिस प्रकार मोर के परों के नक़्शनिगार और बीज के अन्दर ज्यों वृक्ष, फूल, फल, पत्ते सब सूक्ष्म रूप में रहते हैं, इसी तरह मन पर सूक्ष्म चिह्न इकट्ठे हो गये हैं। यदि यह गिरना चाहे, तो झट नरक का कीड़ा बन जाय। उन्नति करना चाहे तो स्वर्ग प्राप्त कर सकता है। इस अनादिकालके भ्रम के चक्कर से छूटना चाहे, तो छूट सकता है। जिस प्रकार बीज पानी से उगता है और बिना पानी के धरती में ही जल जाता है, इसी प्रकार कर्मों का समूह जो मन है "सोऽहं" की साधना से अपने स्वरूप में लग जाता है और कर्मों के या विचारों के सूक्ष्म परमाणु इससे शक्ति न पाकर गल सड़ जाते हैं और सङ्कल्प मिट जाते हैं।

सङ्कल्प के मिटते ही अपना स्वरूप दिखाई देगा। जिस तरह हिलते पानी में मुख दिखाई नहीं पड़ता, ज्योंही पानी ठहरा त्योंही अपना मुख देख लो। वह तो पहले से ही साफ़ है, हम भ्रम से नहीं देख सकते। भ्रम गया, आत्मानन्द पालो, तुम आश्चर्य करोगे कि मैं ही ब्रह्म हूँ, मेरे सिवा कुछ है ही नहीं।

इसके पश्चात् जिज्ञासु "सोऽहं" का उच्चारण करना छोड़ दे। यह अजपा जाप हर श्वास के साथ हर वस्तु से हो रहा है। वह अपने आप जारी है। नाक के नथनों से आवाज़ (ध्वनि) इसकी हो रही है। इस को सुनो। यह ब्रह्म की ध्वनि या अपना आपा शब्द है।

"एकोऽहं बहुस्याम" के सङ्कल्प के पश्चात् जब रोग मालूम हुआ, तो साथ ही दवाई भी बन गई और प्रथम जो भजन में लिखा है कि—

"अनुभव स्वरूप निज रूप लखा
निज सोहं सोहं रटा रटा।"

यह पहले क्लास के जिज्ञासु के लिये है। दूसरे क्लास में औषधि स्वयं बनी-बनाई मिलती है, बनानी नहीं पड़ती। इस दशा पर पहुँचते ही मन मर जाता है। इसके मरने की सबसे बढ़कर यही विधि है। अब जब किसी संकल्प का बीज ही नहीं है, तो कोई इधर-उधर का सङ्कल्प कदापि ठहर ही नहीं सकता है।

यहाँ जिज्ञासु कुछ-कुछ अपने को शरीर से अलग देखता है। अब "ब्रह्म सत्य है, और जगत् मिथ्या है" इस विचार को हर समय सामने रक्खो। इसका साधन यहाँ तक बढ़ता जाय कि, यदि साधन छोड़ भी देवे तो दुबारा शुरू करने का शौक़ बराबर लगा रहे कि; तार (सिलसिला) न टूटे। दिन-दिन इसे बढ़ाता भी जावे। "जगत् मिथ्या है" इसका अर्थ यह

है कि, अपने स्वरूप के सिवा जो कुछ दिखाई देवे, सब भ्रम है—स्थिर न रहने वाला और नाशमान् है। जो कुछ दीखता है, वह सब मनका भ्रम है।

जिस प्रकार बाँस से अग्नि पैदा होकर बाँस को ही जला देती है, इसी तरह यह मन भी आत्मा से पैदा होकर उसी को तुच्छ कर देता है। "सोऽहं" इस पाप-केन्द्र को जड़ से नाश करता है। योग-शास्त्र में छः मास यह साधन करने को लिखा है और कहा है कि, कोई स्वाँस व्यर्थ न जावे। हर एक स्वाँस में "सोऽहं" का अनुभव करो। जब सो जाओ, तो इसी ध्यान में सोओ। बराबर वही दिन वाला असर रहेगा।

इस साधन में अभ्यासी जब मन की शुद्धि और नये-नये चमत्कार,—जैसे रात्रि को उठना, अँधेरे में एक दम उजेला दिखाई देना इत्यादि देखने लगे, तो नीचे लिखी ग्यारह बातों पर अपने को चलने का अभ्यासी बनावे :—

(१)—भोजन की कमी (२) क्रोध, और (३) हर प्रकार के सङ्कल्पों से, जो संसारी हों, दूर रहना (४) आराम, तकलीफ़ भले-बुरे सब समय में एक समान समभाव रखना। (५) अपने में इतना दृढ़ रहना, कि किसी के कुछ भी कहने पर (भला या बुरा) चेहरे की रंगत न बदले और मन पर कोई असर न पड़े।

(६) स्वर्ग, नरक की और किसी प्रकार के नाशमान् पदार्थ की इच्छा नहीं करना।

(७) किसी भी वस्तु को अपने स्वार्थ के लिये न रखना।

(८) बे-लालच रहना।

(९) महात्माओं की तलाश करना।

(१०) मूर्खों की सङ्गति से और संसारियों की सङ्गति से अलग रहना।

(११) केवल अपने स्वरूप का दृढ़ ध्यान करना कि, परमात्मा का प्रकाश बाहर-भीतर सर्वत्र झलका करे। अपने ध्यान को दूसरी ओर न लगाना। इन ग्यारह नियमों में दश इन्द्रियों के लिये और एक मन के लिये है। जब इस पद को जिज्ञासु प्राप्त कर ले, तब "सो" की उपासना आरंभ करे।

ऊख में मधुराई जैसे, सेंधे में है नमकापन।
तिलों में है तेल, और शीतलता ओले में॥
नीम में है कडुआपन जैसे, मिर्च में है तीक्ष्णता।
दूध में है घृत, और सुगन्ध है बेले में।
आम में खटाई जैसे, अग्नि में है उष्णता।
शोरे मे खारापन, रूई है बिनौले में॥
काष्ठ में है अग्नि जैसे, बीज में ह वृक्ष छिपा।
ऐसे राम छिपा, प्राणी के चोले में।

फल में सुगन्ध और दूध में मक्खन दिखाई नहीं देता; परन्तु पुरुषार्थ से अलग हो जाता है और अलग होने पर फिर

नहीं मिलता, इसी तरह आत्मा सर्व वस्तुओं में एकसा वर्त्तमान है। मन, बुद्धि और इन्द्रिय इसकी शक्तिके सहारे हैं। फिर जब मन और बुद्धि और नेत्र इसी से शक्ति पाकर शक्तिमान् बन बैठे हैं, भला उनमें क्या शक्ति है, कि इस परमात्मप्रकाश को देखें। वह किसी इन्द्रिय से देखा-सुना नहीं जाता। यह विचार "सो" की उपासना से दृढ़ हो जाता है। इसके पश्चात् आनन्द, शान्ति व मौनावस्था होती है। सोऽहं में जो "हं" है, वह मन का स्वभाव है। मनसूरने रूममें 'अहं ब्रह्मोऽस्मि' कहा, सूलीपर चढ़ाया गया। जब ब्रह्म है, फिर अपने को ब्रह्म कहलाने को 'या मैं ब्रह्म हूँ' इस वाक्य के उच्चारण करने की क्या ज़रूरत है? साफ़ कमी और कसर पाई जाती है। माया से और मन से सम्बन्ध दिखाई पड़ता है और मालूम होता है, कि वर्षों तक भूला रहा और अब कहता है कि, मैं ईश्वर हो गया हूँ अथवा पहले ईश्वर नहीं था।

नाम रङ्ग रूप वहाँ होता है, जहाँ बहुतायत हो और उन में भेद करना पड़ता है। ईश्वर कहने से वह सृष्टि का सङ्कल्प साथ रखता है।

श्रुति यहाँ तक भेद को कह गई। आगेका भेद लिखने में नहीं आ सकता; क्योंकि मिठाईका मज़ा जिसने न चक्खा हो, वह लिखने से किस तरह समझ सकता है। इसको वही मनुष्य अनुभव कर सकेगा, जिसने इस मार्गमें उन्नति कर ली है।

अब स्वाँस की पाबन्दी छोड़ दो। हर समय हर काम में

सः, सः, सः, अर्थ-पूर्वक, कहते जाओ। एक मास ऐसा करने से एक आवाज़ जो हर जगहसे हो रही है, अर्थात् "सः" (वह) की ध्वनि, उसे हर जगह सुनो। उधर ही ध्यानारूढ़ हो जाओ।

अब सुरत साधने का ठीक समय आ गया है। सुरत में चैतन्य और होशियार रहो। यहाँ अपना आपा देखो। यहाँ बड़ी बुद्धिमानी और फुरती का काम है। कोई भी विचार या सङ्कल्प मन में सिवा "सः" के न उठे। यहाँ सब स्वार्थ-विषयक पदार्थों का त्याग कर दो—

"सो" का अर्थ है "निज स्वरूप" सो, इस स्वरूप, "अजपा जाप" को सुनते-सुनते यह ध्यान करो, कि वह तेज जो सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि में वर्तमान है, वह मेरे तेजःस्वरूप का एक राई मात्र अणु है। और अपने स्वरूप का ध्यान इस तरह बाँधो, जैसे गीता में भगवान् श्री कृष्णचन्द्र ने कहा है। अपने स्वरूप में लीन हो जाओ, यही निश्चल समाधि आत्मसाक्षात्कार व जीवन्मुक्ति की अवस्था है।

उन्नति का सच्चा उपाय।

(१) जब तक किसी काम में पूरे तौर से मन न लगाया जावे, सफलता प्राप्त करना असम्भव है।

(२) ध्यान पूरे तौर से तब तक नहीं लग सकता, जब तक कि मन एकाग्र न हो।

(३) मन एकाग्र नहीं हो सकता, जब तक किसी साधन द्वारा उस पर जय न पाई जावे।

(४) साधन बिना गुरु के जाना नहीं जाता।

(५) परन्तु अच्छे गुरु का मिलना हर जगह कठिन है।

(६) भाग्योदय से यह कमी योगाश्रम ने पूरी कर दी है।

(७) यदि आप विचारों पर जय रखकर उन से विचित्र-विचित्र काम लेना चाहते हैं, या

(८) आप धोखेबाज़ लोगों के जाल से तंग आकर इस विद्या से विश्वास रहित हो गये हैं, या

(९) सांसारिक कामों में उन्नति चाहते हैं; या

(१०) इसी शरीर में रहकर आत्मिक चमत्कारों के देखने के उत्सुक हैं—

(११) तो अवश्य ही एक बार मेम्बर बनकर अपनी शुभ इच्छाओं को पूरी करें।

(१२) परन्तु याद रहे कि आप नशेबाज़, हिंसक, जुआरी, रिश्वती विचारों के हों तो पत्र मेम्बरी न भेजें ;

(१३) क्योंकि ऐसे महापुरुषों का ठिकाना यहाँ नहीं है।

(१४) यदि मेम्बर बन गये तो पहले ही साधन से तुम्हारा मन वा विचार तुम्हारे वश में हो जावेगा।

(१५) विचार हाथ जोड़े खड़ा रहेगा।

(१६) अब मन तुम्हारे वश में है, जिधर लगाओ उन्नति ही उन्नति है।

योगके प्रचारार्थ मासिक सहायता १), ॥) अपनी योग्यतानुसार देनी पड़ती है, जिसमें आधी से अधिक व कभी-कभी पूरी से अधिक मैस्मरेज़म, हिप्नाटिज़्म योग आदिके यन्त्र व डाक-टिकट व चिट्ठी-पत्री छपाई आदि के रूप में तुमको वापिस मिल जाती है। ग़रीबों को शिक्षा मुफ़्त दी जाती है।

योग की सब शाखायें जैसे राजयोग, हठयोग, मानसिक-योग, प्रेमयोग, आवेशयोग और लययोग आदि की अनुभवपूर्ण शिक्षा दी जाती है तथा आधुनिक विद्यायें जैसे मैस्मरेज़म, हिप्नाटिज़्म, स्प्रिचुएलिज़म आदि की भी शिक्षा दी जाती है। इस समय ५००० मेम्बरों को मुफ़्त शिक्षा ३ मास तक दी जावेगी। केवल डाक-ख़र्च उनके ज़िम्मे होगा।

पता---मैनेजर योगाश्रम,
पोस्ट० हरिपुर, ज़ि० हज़ारा, पंजाब।